प्रसार दूत

कृषि विज्ञान की अग्रणी पत्रिका

मेला विशेषांक

मार्च 2020

कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केन्द्र (एटिक)

कृषि प्रौद्योगिकी आकलन एवं स्थानान्तरण केन्द्र
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान
नई दिल्ली–110012

संपादकीय

किसान भाइयों नमस्कार, पूसा संस्थान के नवनियुक्त निदेशक डॉ. अशोक कुमार सिंह के नेतृत्व में इस वर्ष का यह अंक पूसा कृषि विज्ञान मेला मार्च 1–3, 2020 को आयोजित किया जा रहा है। आपको पूसा कृषि विज्ञान मेला की बहुत बहुत बधाई। देशभर से हमारे किसान बड़ी उत्सुकता से संस्थान द्वारा आयोजित होने वाले किसान मेले की प्रतीक्षा करते हैं। वैसे तो कई संस्थाएँ अपने–अपने स्तर पर कृषि उत्सव और मेलों का आयोजन करती रहती हैं, परंतु पूसा कृषि विज्ञान मेला की विशेष प्रतिष्ठा है। यहाँ देशभर की कृषि संस्थाएँ एवं कृषि कंपनियाँ अपनी प्रौद्योगिकियाँ और उत्पादों का प्रदर्शन एवं बिक्री करती हैं तथा किसान भाई भी अपने कृषि उत्पाद की बिक्री करते है।

मेले में चलने वाली गोष्ठियों में किसानों, वैज्ञानिकों और नीति निर्माताओं के बीच सीधी चर्चा होती है, जिनमें विभिन्न शासकीय योजनाओं के बारे में खुलकर चर्चा होती है। जहाँ एक ओर किसानों की भ्रांतियों का निराकरण होता है वहीं सीधे प्रतिपुष्टि भी मिलता है, जिससे योजनाओं में सुधार करने का रास्ता खुलता है।

मेले में एक दिलचस्प सत्र नवोन्मेषी किसान सम्मेलन का होता है, जिसमें देशभर से पुरस्कृत किसान अपनी कामयाबी का राज साझा करते हैं, कि किस तरह उन्होंने अपने समक्ष आने वाली समस्याओं का समाधान करते हुए कृषि को मुनाफे वाले उद्यम में परिवर्तित किया। यह सत्र किसानों के लिए बहुत प्रेरक होता है। हमने पाया है कि तकनीकी हस्तांतरण में वैज्ञानिकों की तुलना में हमेशा किसान अधिक विश्वसनीय माने जाते हैं। एक किसान भाषा, ज्ञान और अनुभव के स्तर पर वैज्ञानिकों व अधिकारियों के बजाए किसी दूसरे किसान को अपने अधिक करीब पाता है, इसलिए उसकी जुबानी बताई गई बातें कहीं गहरे असर करती हैं। वे यह भी मानते हैं कि यदि यह किसान होकर सफल हो सकता है, तो मैं क्यों नहीं। इसी कारण नवोन्मेषी किसान सम्मेलन की परिकल्पना की गई, जिसमें पूसा कृषि विज्ञान मेले में देश भर से सफल किसानों को पुरस्कृत किया जाता है, और उनके अनुभव सुने जाते हैं।

इस कार्यक्रम से जहाँ एक ओर श्रोता किसानों को लाभ होता ही है, वहीं पुरस्कृत किसानों को राष्ट्रीय स्तर पर प्रोत्साहन मिलता है तथा आत्मविश्वास में बढ़ोतरी होती है। यह संस्थान पिछले 11 वर्षों से 436 किसानों को पुरस्कृत कर चुका है, जिससे प्रेरित होकर देशभर में अन्य संस्थानों ने भी किसानों के लिए पुरस्कारों की शुरूआत की है। सरकार ने भी संज्ञान में लेते हुए इस वर्ष अनेक किसानों को पद्मश्री पुरस्कार से सम्मानित किया है, जिनमें संस्थान द्वारा पुरस्कृत किसान भी शामिल हैं। इस वर्ष यह मेला आयोजित करना हमारे लिए एक चुनौती थी। परंतु किसानों के प्रति हमारी प्रतिबद्धता ने हमें समय पर मेला आयोजित करने के लिए प्रेरित किया।

इस मेले में किसानों को रियायती दरों पर स्टॉल लगाने की सुविधा है। किसानों को उनके उत्पाद का वाजिब मूल्य दिलाने की दिशा में यह संस्थान का बड़ा कदम है। देशभर से किसान अपने प्रसंस्कृत कृषि उत्पाद मेले में बेचते हैं, और मेले में आगंतुक ग्राहकों और संभावित ग्राहकों, बड़ी कंपनियों के साथ संपर्क स्थापित करते हैं।

हर बार की भांति इस बार भी प्रसार दूत में किसानोंपयोगी लेख शामिल किए गए हैं। आगामी मौसम को ध्यान में रखते हुए प्रासंगिक जानकारी देने के लिए पोषण, स्वास्थ्य एवं आजीविका सुरक्षा हेतु जायद मौसम में सब्जी उत्पादन की उन्नत प्रौद्योगिकियां, जायद मे मूंग की उन्नत खेती, बीज की गुणवत्ता में बीजोपचार का महत्व, व्यवसायिक खेती

के लिये फलों की नवीन किस्में, मृदा स्वास्थ्य में सुधार की सर्वोत्तम प्रबंधन तकनीकियां, भंडारित खाद्यान्नों में समेकित कीट व अन्य पीड़क प्रबंधन, प्लास्टिक पलवार – औद्यानिकी फसलों के लिये वरदान, पिगमेंटेड चावल मे संशोधन द्वारा स्टार्च मूल्य संवर्धनः मानव पोषण में सुधार करने का वादा, प्राकृतिक विटामिन–ई की कुशल और लागत प्रभावी निष्कर्षण विधि, मृदा रहित खेती में अभिनव प्रौद्योगिकियाँ, सतत पोषण सुरक्षा के लिए सहजन की खेती, किसानों हेतु सब्जियों की संरक्षित खेती : एक लाभकारी तकनीक तथा पूसा अरहर 16 की उत्पादन तकनीकी विषयों पर आलेख हैं। यह अंक आपको कैसा लगा, हमें अवश्य सूचित करें।

संपादक

मार्च 2020

प्रसार दूत

वर्ष 25 | 2020 | अंक-1

संरक्षक
डॉ. अशोक कुमार सिंह
निदेशक

डॉ. जे.पी. शर्मा
संयुक्त निदेशक (प्रसार)

प्रधान सम्पादक
डॉ. जे.पी.एस. डबास

सम्पादक
डॉ. एन.वी कुंभारे

सम्पादक मंडल
डॉ. वाई. वी. सिंह
डॉ. अमित गोस्वामी
श्री के. एस. यादव
डॉ. हरीश कुमार
डॉ. वाई. पी. सिंह
श्री आनन्द विजय दुबे

तकनीकी सहयोग
श्री विजय सिंह जाटव
श्री लक्खी राम मीणा
श्री राजेश सिंह

शुल्क और लेख भेजने एवं पत्रिका मंगाने का पता
कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केन्द्र (एटिक)
भा.कृ.अ.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान
नई दिल्ली–110012
फोनः 011–25841039
पूसा एग्रीकॉमः 1800118989 (टोल फ्री)
ई–मेंलः incharge_atic@iari.res.in
वेबसाइटः www.iari.res.in

विषय सूची | पृष्ठ संख्या

सम्पादकीय

1 पोषण, स्वास्थ्य एवं आजीविका सुरक्षा हेतु जायद मौसम में सब्जी उत्पादन की उन्नत प्रौद्योगिकियां 1

2. जायद में मूंग की उन्नत खेती 9

3. बीज की गुणवत्ता में बीजोपचार का महत्व 13

4. व्यवसायिक खेती के लिये फलों की नवीन किस्में 16

5. मृदा स्वास्थ्य में सुधार की सर्वोत्तम प्रबंधन तकनीकीया 19

6. भंडारित खाद्यान्नों में समेकित कीट व अन्य पीड़क प्रबंधन 23

7. प्लास्टिक पलवार – औद्यानिकी फसलों के लिये वरदान 29

8. पिगमेंटेड चावल में संशोधन द्वारा स्टार्च मूल्य संवर्धनः मानव पोषण में सुधार करने का वादा 33

9. प्राकृतिक विटामिन–ई की कुशल और लागत प्रभावी निष्कर्षण विधि 36

10. मृदा रहित खेती में अभिनव प्रौद्योगिकियाँ 38

11. सतत पोषण सुरक्षा के लिए सहजन की खेती 43

12. किसानों हेतु सब्जियों की संरक्षित खेती : एक लाभकारी तकनीक 47

13. पूसा अरहर–16 की उत्पादन तकनीकी 51

वार्षिक शुल्क ₹ 80/– मनीआर्डर द्वारा

एक प्रति मूल्य ₹ 20/–

पोषण, स्वास्थ्य एवं आजीविका सुरक्षा हेतु जायद मौसम में सब्जी उत्पादन की उन्नत प्रौद्योगिकियां

रमेश कुमार यादव, हर्षवर्धन चौधरी एवं भोपाल सिंह तोमर
शाकीय विज्ञान संभाग,
भा.कृ.अ.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली – 110012

कृषि के अन्तर्गत शाकीय फसलों की एक अग्रणी एवं महत्वपूर्ण भूमिका है, जो लोगों के पोषण सुरक्षा के साथ–साथ कृषकों के लिए अधिक आर्थिक लाभ प्रदान करने में सहायक है। किसी भी खाद्यान्न फसलों की तुलना में सब्जियों की खेती से किसान 2 से 5 गुना तक अधिक आय अर्जित करते हैं। सब्जियां प्रति ईकाई क्षेत्रफल से कम समय में अत्यधिक उपज एवं आय प्रदान करने के साथ साथ प्रसंस्करण एवं निर्यात के लिए उपर्युक्त होने के कारण आज छोटे एवं मध्यम किसानों के बीच काफी प्रचलित होती जा रही हैं।वर्तमान में हमारे देश में सब्जियों के अन्तर्गत भू–भाग 10.2 मिलियन हेक्टेयर है और उससे कुल सब्जी उत्पादन 178 मिलियन टन है। उसके साथ ही हमारा देश चीन के बाद विश्व का दूसरा सबसे बडा सब्जी उत्पादक देश है परन्तु हमारी सब्जी की उत्पादकता विकसित देशों की उत्पादकता से काफी कम है। भारतीय चिकत्सा अनुसंधान परिषद की अनुशंसा के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को प्रतिदिन 300 ग्राम सब्जियों का सेवन करना चाहिए जिसके लिए हमें सब्जी की उत्पादकता बढाने की आवश्यकता है। हमारे देश में सब्जियों की उत्पादकता को बढाने के लिए निजी एवं सरकारी संस्थानो ने काफी प्रयास किये हैं। प्रारम्भ में सरकारी संस्थानो ने सब्जियों की उन्नत किस्मों के साथ संकर प्रजातियों का विकास करके किसानों की आय बढाने में महत्वपूर्ण कार्य किया। आज सब्जियों की संकर किस्में किसानों के बीच काफी लोकप्रिय होती जा रही हैं। परन्तु अभी भी काफी बडे भूभाग में किसान क्षेत्रीय प्रजातियों के बीजों को परम्परागत तरीके से ही लगा रहे हैं। यदि किसान अपनी खेती में सब्जियों की नई विकसित की गई उन्नत किस्मों/संकर प्रजातियों तथा सब्जी उत्पादन की उन्नत प्रौद्योगिकी को शामिल करें तो सब्जियों की उत्पादकता एवं उत्पादन को कई गुना बढा सकते हैं।

सब्जियों का महत्वः

सब्जियों का महत्व निम्नलिखित कारणों से बढता ही जा रहा है।

1. सब्जियां पोषक तत्वों का महत्वपूर्ण एवं सस्ता स्रोत हैं।
2. सब्जियां खाद्य सुरक्षा के साथ पोषण सुरक्षा भी प्रदान करती हैं।
3. संतुलित आहार के लिये सब्जियां आवश्यक हैं।
4. सब्जियों में एंटी आक्सीडेंट की प्रचुर मात्रा होती हैं।
5. विभिन्न प्रकार के रंग, आकार, एवं महक के कारण भोजन को जायकेदार बनाती है।
6. कम जमीन से कम समय में अधिक आय का साधन हैं।
7. हर प्रकार के मौसम एवं कृषि चक्र/पद्वति में समावेश।
8. निर्यात एवं प्रसंस्करण की संभावना।
9. सब्जियों का पौध एवं बीज उत्पादन एक लाभप्रद व्यवसाय हैं।

तालिका 1: स्वास्थ्यवर्धक तत्वों से भरपूर सब्जियां।

पोषक तत्व	पोषण युक्त सब्जियां
कार्बोहाइड्रेट	आलू, शकरकन्द, याम, टैपियोका
प्रोटीन	हरी मटर, सेम, फ्रान्सबीन, लोबिया, ग्वार, बांकला, चौलाई
विटामिन–ए	गाजर, पालक, चौलाई, सीताफल, मैथी, धनिया, पार्सले, हरी प्याज
विटामिन–बी	हरी मटर, सेम, पालक, बैंगन
विटामिन–सी	टमाटर, शिमला मिर्च, हरी मिर्च, पार्सले, बंदगोभी, मूली
कैल्सियम	चुकन्दर, चौलाई, धनिया, पेठा, प्याज, हरी पत्ती वाली सब्जियॉ
पोटैशियम	शकरकन्द, आलू, करेला, मूली, सेम, प्याज, हरी पत्ती वाली सब्जियॉ
फॉस्फोरस	लहसुन, हरी मटर, करेला, आलू, टमाटर, खीरा, पालक, फूलगोभी
लौह तत्व	करेला, चौलाई, मैथी, पोई, पालक, मटर, बंदगोभी, सेम

सब्जियों में कुछ ऐसे फाइटोकेमिकल्स होते हैं जो हमारे शरीर को बीमारियों से बचाने में काफी सहायक सिद्ध होते है। जो नीचे दी गयी तालिका में दर्शाये गये हैं।

तालिका 2: सब्जियों में पाये जाने वाले प्रमुख फाइटोकेमिकल्स एवं उनके लाभ

फसल	पिगमेंटस	लाभ
टमाटर	लाइकोपिन	कैंसर रोधी
प्याज	एलाईल सल्फाइडस	कैंसर रोधी, हृदय रोगो से बचाव में सहायक
लहसुन	एलाइल प्रोपाइल डाई सल्फाइड	कॉलेस्ट्राल नियंत्रक
करेला	मोमोरडिसिन तथा चैरेंटिन	मधुमेह रोधी, रक्त सुधारक एवं उच्चरक्त चाप नियंत्रक
गाजर	बीटा कैरोटीन (पीली) एंथोसाइनिन (काली) एवं लाइकोपिन (लाल)	नेत्र रोगो से बचाव में सहायक एवं एंटीऑक्सीडेंट्स
मूली	आइसोथायोसायनेट्स	मधुमेह रोधी
तरबूज	सिटरूलिन, लाइकोपिन	ओज वर्धक, एंटी ऑक्सीडेंट्स

कम लागत के पाली हाउस में बेमौसमी सब्जी पौध उत्पादनः

व्यवसायिक फसल उत्पादन हेतु स्वस्थ एवं रोगमुक्त बेमौसमी नर्सरी उत्पादन के लिए कम लागत के पाली हाउस काफी उपयुक्त सिद्ध हुये हैं। इनके अलावा कीटरोधी जालघर में (40 मेस नाइलोन) वर्षाकाल में भी स्वस्थ पौध तैयार किया जा सकता है। इन पौधों को आवश्यकतानुसार विभिन्न आकार एवं संख्या के प्लास्टिक ट्रे में उगाया जाता है। दूर दराज के किसान 1:1:1 अनुपात में गोबर, मिट्टी एवं बालू का मिश्रण बनाकर इन प्लास्टिक ट्रे में बीज की बुआई कर सकते हैं। इस मिश्रण में थीरम 3 ग्राम प्रति किग्रा. मिश्रण की दर मिला देना चाहिए। या बीजों का बुआई से पहले 3 ग्राम थीरम प्रति किग्रा. बीज की दर से उपचारित कर लेना चाहिए जब पौध 10–15 सेमी. लम्बी एवं चार पत्तियाँ ठीक से आ जाये तो इनकी रोपाई कर देनी चाहिए। कम लागत के पाली हाउस की संरचना बनाने की लागत तालिका 1 में दी गयी है। सामान्यतः 50 वर्ग मी. के पाली हाउस से प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय वर्ष में क्रमशः लगभग ₹9500/–, ₹25000/– एवं ₹24000/– की आमदनी हो जाती है।

संरक्षित वातावरण में पौधा उगाने हेतु मृदा रहित माध्यम का प्रयोग किया जाता है। जिसमें मुख्यता तीन अवयव होते हैं। कोको पिट, वर्मीकुलाइट एवं परलाइट। इन तीनों के नर्सरी को उत्पादन हेतु माध्यम के रुप में प्रयोग किया जाता है। यह मिश्रण प्रायः कीट एवं बीमारियों से मुक्त होता है अतः पौधगलन जैसी बीमारियाँ कम आती हैं। इन अवयवों को 3:1:1 (भार अनुसार) अनुपात में मिलाकर पौध उगाने वाले बर्तनों या प्रो–ट्रे में भरा जाता है। जिस माध्यम में बड़े आकार के लंबे रेशो वाले कण होते हैं वह कोको पिट बेहतर हवा का संवाहन एवं जल निकासी वाला होता है जिससे पौध में बेहतर जड़ विकास होता है। सर्दी के मौसम में प्रत्येक प्रो–ट्रे को अंकुरण कमरे में रखा जा सकता है। जहां का तापमान 25 डिग्री सेंटीग्रेट रखा जाता है ताकि बीजों का अंकुरण जल्दी व ठीक प्रकार से हो सके। अंकुरण के बाद सभी ट्रे पालीहाउस या अन्य संरक्षित क्षेत्र में बने प्लेटफार्म या फर्श पर फैलाई जा सकती हैं। अंकुरित हुए पौधों को समय समय पर पानी एवं खाद फब्बारे/हजारे की मद्द से दिया जाता है। घुलनशील रासानिक उर्वरक नर्सरी ग्रेड को पानी के साथ ही पौधों को देते हैं पौधे की प्रांरभिक अवस्था में यह रासानिक उर्वरक 70 पी.पी.एम तथा बाद में 140 पी.पी.एम प्रति सप्ताह की दर से दिया जाता है। इस प्रकार पौधे तैयार होने में 22–30 दिन (मौसम के अनुसार) लगते हैं। तैयार पौध को माध्यम सहित मुख्य खेत में रोपाई की जाती है। यह पौध पैक करके दूरस्थ स्थानों तक भी भेजी जा सकती है।

उन्नतशील प्रजातियाँः

आज देश में लगभग अधिकांश सब्जियों की उन्नतशील एवं संकर किस्में उपलब्ध है इन किस्मों की पैदावार अधिक

है एवं इनमें बीमारियों या प्रतिकूल दशाओं से लड़ने की क्षमता अधिक होती हैं। यदि इन उन्नतशील प्रजातियों का बीज लगाया जाये एवं उचित फसल प्रबन्धन किया जाये तो किसान खेती में आने वाली लागत से कई गुणा लाभ प्राप्त कर सकते हैं। इसी को ध्यान में रखते हुए जायद के मौसम में उगायी जाने वाली प्रमुख सब्जी फसलों का विवरण नीचे दिया गया है।

तालिका 3: गर्मी के मौसम में रोपाई करके उगायी जाने वाली प्रमुख सब्जियों का विवरणः

फसल	प्रजाति	नर्सरी/बुवाई का समय	बीज की मात्रा/है0	रोपाई की दूरी (सेमी0)	उपज/है0 (कुन्तल)
टमाटर	पूसा रोहिणी, पूसा हाइब्रिड – 1, पूसा हाइब्रिड – 8	फरवरी –मार्च	300 – 400 ग्रा0 (मुक्त परागण प्रजाति) 150 – 200 ग्रा0 (संकर)	60 X 45	300 500 (संकर)
बैंगन	पूसा उत्तम (गोल), पूसा कौशल (लम्बे) पूसा हाइब्रिड – 5 (लम्बे) पूसा हाइब्रिड – 9 (गोल) पूसा हाईब्रिड–20 (लम्बे)	फरवरी –मार्च	400–500 ग्राम 300–400 ग्राम	60–75 X 50	300–350 400–450 (संकर)
मिर्च	पूसा ज्वाला, पूसा सदाबहार	फरवरी – मार्च	800 – 1000 ग्रा0	60 X 45	90 – 110 (हरी) 9 – 10 (सूखी)
शिमला मिर्च	कैलिफोर्निया वण्डर	जनवरी –फरवरी	800 ग्रा0 350 ग्रा0	45 X 30	80 120

तालिका 4: गर्मी के मौसम में सीधे बीज बुआई से उगायी जाने वाली प्रमुख सब्जियों का विवरणः

फसल	उन्नत किस्में	बीज की मात्रा/है0	बीज बोने का समय	रोपाई की दूरी (सेमी.) पंक्तियांx पौधे	पैदावार (कुन्तल/है.)
भिन्डी	पूसा भिन्डी –5	10–12 किग्रा.	फरवरी –मार्च	60 X 30	125–150
चौलाई	पूसा लाल चौलाई, पूसा किरण	2–3 किग्रा.	फरवरी –मार्च	30 X 10	300
ग्वार	पूसा नवबहार	12–15 किग्रा.	फरवरी –मार्च	45 X 20	100–120
लोबिया	पूसा धरिणी, पूसा सुकोमल,	20–25 किग्रा.	फरवरी –मार्च	45 X 30	80–100
मूली	पूसा चेतकी	8 – 10 किग्रा.	फरवरी –अप्रैल	20 X 8	200

कद्दू बर्गीय सब्जियों की अगेती खेती के लिए कम लागत के पॉलीहाउस में पौध उत्पादनः

उत्तरी भारत के मैदानी भाग में कम लागत के अस्थायी पालीहाउस में जनवरी महीने में लौकी, करेला, खीरा, खरबूजा, तरबूज, कद्दू आदि सब्जी फसलों की नर्सरी तैयार कर गर्मी के मौसम में इनकी अत्यंत अगेती फसल ली जा सकती है। पी.वी.सी. पाइप अथवा बाँस तथा 700 गेज की पालीथीन चादर द्वारा आवश्यकतानुसार तथा स्थान की उपलब्धता के अनुरूप किसी भी आकार की झोपड़ीनुमा संरचना को बनाया जा सकता है। इस अस्थायी पालीहाउस के अंदर का तापमान बाहर के तापमान की तुलना में 6–10 डिग्री. सेल्सियस अधिक रहता है। पौध तैयार करने के लिए लगभग 15 X 10 सेमी. आकार की पालीथीन की थैलियों के अलावा 5 सेमी. व्यास के 50 खाने वाले प्रो–ट्रे में भी पौध उगा सकते हैं। इन थैलियों/प्रो–ट्रे में लगभग 1 सेमी. की गहराई पर बीज की बुआई करके बालू की पतली परत बिछा लेते हैं तथा हजारे की सहायता से पानी लगाते है। लगभग 4–5 सप्ताह में पौधे खेतों में लगाने के योग्य हो

जाते हैं। जब फरवरी माह में पाला पड़ने का डर समाप्त हो जाये तो पालीथीन की थैली को ब्लेड से काटकर हटाने के बाद पौधे को मिट्टी के साथ ही खेत में बनी नालियों की मेंडों पर रोपाई करके पानी लगाते है।

कद्दूवर्गीय सब्जियों की अगेती खेती के लिए प्लग ट्रे में पौध तैयार करनाः

जनवरी माह में कद्दूवर्गीय फसलों की प्लग ट्रे में पौध तैयार कर सकते हैं। प्लग–ट्रे जिनके उल्टे पिरामिड आकार रूपी एक खांचे की (1–5 इंच साइज) आयतन मात्रा 18–20 घन हो जिसमें कोकोपिट, वर्मीकुलाइट और परलाइट का 3:1:1 भाग का मिश्रण बनाकर ट्रे में भर ले व बीजों की बुआई 1 से. मी. गहराई पर करे। बीज की बुआई करने के पश्चात प्लग ट्रे पर वर्मीकुलाइट की परत चड़ा दे और हल्के पानी का छिड़काव करें। उर्वरकों जैसे नत्रजन, फॉस्फोरस और पोटैशियम (20:20:20 ग्रेड) का घोल बनाकर 100–150 पी.पी.एम. (100–150 मिली ग्राम प्रति लीटर पानी में) की दर से 2–3 दिन अन्तराल पर प्लग ट्रे में छिड़काव करे। पौध बुआई से 25–28 दिनो में रोपाई के लिए तैयार हो जाती है।

इस तकनीक को अपनाने से किसी भी कद्दू वर्गीय फसल की खेतों में सीधी बुआई (मार्च में) की सामान्य पद्धति की तुलना में एक से डेढ माह पहले उपज मिलनी शूरू हो जाती है। जिससे किसानों को अपने उत्पाद की अधिक कीमत बाजार में मिलती है तथा उनकी कुल लाभ में वृद्धि होती है। इसके अलावा एक डेढ माह के समय तक खेत में अन्य फसल का उत्पादन लेने से प्रति इकाई भूमि से वर्ष भर में प्राप्त कुल उपज में भी वृद्धि होती है तथा किसानों की सालाना आय अधिक होती है। जायद के मौसम में उगायी जाने वाली कद्दू वर्गीय सब्जियों का विवरण तालिका 4 में दिया गया है।

तालिका 4: गर्मी के मौसम में उगायी जाने वाली कद्दू वर्गीय सब्जियों का विवरणः

फसल	उन्नत किस्में	बीज की मात्रा/है0	रोपाई की दूरी (सेमी0) पंक्तियां x पौधे	पैदावार (कुन्तल/है0)
लौकी	पूसा नवीन, पूसा संदेश, पूसा सतुंष्टि, पूसा समृद्धि, पूसा हाइब्रिड–3,	4–5 किग्रा.	300 X 75	300–350 350–400
करेला	पूसा रसदार, पूसा औषधि, पूसा दो मौसमी, पूसा विशेष, पूसा हाइब्रिड–1, पूसा हाइब्रिड–2	5–6 किग्रा.	180 X 60	150–200 200–250
खीरा	पूसा उदय, पूसा बरखा,	1.5–2.0 किग्रा.	150 X 60	120–150
तरबूज	शुगर बेबी अर्का मुत्थु अर्का मधुरा (बीज रहित)	4.0–4.5 किग्रा.	250 X 75	250–300
खरबूजा	पूसा मधुरस काशी मधु हरा मधु	2.5–3.0 किग्रा.	180 X 60	150–200
टिण्डा	पूसा रोनक , पंजाब टिण्डा	4–5 किग्रा.	150 X 50	100–150
धारीदार तोरई	पूसा नसदार, सतपुतिया, पूसा नूतन,	5–6 किग्रा.	200 X 60	100–150
चिकनी तोरई	पूसा सुप्रिया, पूसा स्नेहा, पूसा श्रेष्ठ	5–6 किग्रा.	200 X 60	100–150
सीताफल	पूसा विश्वास पूसा विकास पूसा हाइब्रिड–1	3–4 किग्रा.	300 X 75	300–350 400–450
चप्पन कद्दू	पूसा अलंकार (हाइब्रिड) आस्ट्रेलियन ग्रीन पूसा पसन्द	6–7 किग्रा.	60 X 60	200–250

गर्मी में प्याज की सेट्स (गाँठे) तैयार करके खरीफ प्याज की तकनीकी खेतीः

उत्तरी भारत में प्याज की खेती सामान्यतया रबी फसल के रूप में की जाती है, जबकि महाराष्ट्र, गुजरात, आन्ध्रप्रदेश, कर्नाटक और तमिलनाडू में इसकी खेती खरीफ तथा रबी दोनों मौसमों में की जाती है। खरीफ प्याज के मामले में महाराष्ट्र में सबसे अधिक क्षेत्रों में इसकी खेती की जाती है और फसल की कटाई अक्तूबर– दिसम्बर के बीच की जाती है। भंडारण के दौरान कन्दों में अंकुरण निकलने के कारण फसल को अक्तूबर के बाद भंडारित नहीं किया जा सकता । उत्तरी भारत के बाजार में रबी फसल आने से पहले महाराष्ट्र में पैदा होने वाली खरीफ फसल की प्याज अक्तूबर–अप्रैल तक उपलब्ध रहती है। सीमित उत्पादन तथा भारी परिवहन खर्चों के कारण इस अवधि के दौरान प्याज के दाम कहीं अधिक होते हैं।प्याज की खरीफ फसल की महत्ता को देखते हुए शाकीय विज्ञान संभाग, भा.कृ.अ.सं., नई दिल्ली ने उत्तरी भारत में प्याज की खरीफ फसल की संभावनाओं की पहल की। इस संभाग द्वारा सृजित प्रौद्योगिकी यहां नीचे दी गई है जिसे दिल्ली, हरियाणा, पूर्वी उत्तर प्रदेश, बिहार, राजस्थान तथा मध्यप्रदेश के किसानों ने अपने खेतों में अपनाया है।

किस्में: एन–53, एग्रीफाउंड डाक्र रेड, भीमा रेड, भीमा डाक्र रेड, पूसा रिद्धि

पौध तैयार करना: प्याज की पौध उठी हुई क्यारियों में तैयार करनी चाहिए। बीज डालने से पहले मिट्टी को उपचारित करना चाहिए। क्यारियों में बीज बोने से पहले केप्टान के 0.3 प्रतिशत घोल से 5 लीटर प्रति वर्गमीटर की दर से उपचारित कर लेना चाहिए। उत्तर भारत के मैदानी भागों में बीज की बुवाई मध्य जनवरी से फरवरी के प्रथम सप्ताह तक की जानी चाहिए। प्रति वर्गमीटर क्षेत्रफल में लगभग 15–20 ग्रा. बीज बोया जाना चाहिए। एक हैक्टयर भूमि में लगाने के लिए 50–55 क्यांरियां 3.0 मी.^{2} क्षेत्रफल की पर्याप्त होती हैं जिनमें 8 से 10 किलो बीज की बुवाई करते हैं।

पौध रोपण: खरीफ प्याज के लिए फरवरी में प्याज की नर्सरी बनाकर मई में सेट (कन्द) तैयार कर लेते है। इन सेटों को जुलाई – अगस्त में उॅची मेंडों पर लगाते है। इसके अलावा सीधे पौध तैयार करके भी जुलाई – अगस्त में रोपाई कर सकते हैं। परन्तु सेट से पैदावार ज्यादा मिलती है। एक हेक्टेयर क्षेत्रफल के किए लगभग 12–15 कुन्तल सेट की आवश्यकता होती है। खेत में 20–25 टन गोबर की खाद के साथ 120 किग्रा. नाइट्रोजन, 80 किग्रा. फास्फोरस एवं 90 किग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से मिलाते हैं। इसके अलावा 10–15 किग्रा./हेक्टेअर. सल्फर भी मिलानी चाहिए। खरीफ की प्याज नवम्बर – दिसम्बर में तैयार हो जाती है और ऐक हेक्टेअर से लगभग 200 कुन्तल प्याज प्राप्त की जा सकती है। खरीफ की प्याज का भण्डारण नहीं किया जा सकता हैं। इसिलिए इसे खुदाई के बाद लगभग एक महीने के भीतर बाजार में बेच देना चाहिए। चूकिं इस समय बाजार में प्याज की उपलब्धता कम रहती है अतः खरीफ प्याज की बिक्री आसानी से हो जाती है और मुनाफा भी काफी प्राप्त हो जाता है।

कटाई: पत्तियों में रंग फीका पड़ने तथा कंदों का सही आकार होने और उनमें समुचित रंग आने पर, रोपण के लगभग 5 महीने पश्चात दिसम्बर–जनवरी के दौरान फसल की खुदाई की जाती है। कंदों की खुदाई पौधे का ऊपरी भाग बनाए रखते हुए की जाती है (कम तापमान के कारण वे सूख नहीं पाते) । ऊपरी भाग को सूखने के उद्देश्य से फसल को कुछ दिनों के लिए खेत में ही रखा जाता है। बाद में पत्तियों को हटा दिया जाए और कंदों को बाजार में भेजने से पहले 2–3 दिन तक सुखाया जाए।

भंडारण: बढ़वार को नियंत्रित करने तथा कंदों को सूखा तथा गठीला होने देने के लिए कटाई से 10 दिन पहले ही सिंचाई बंद कर देनी चाहिए। एम एच–40 (मैलेइक हाइड्रेज़ाइड) घोल 2500 पी पी एम (मि.ग्र./लीटर जल) का छिड़काव रोपण के 90–95 दिन बाद करने से भंडारण के दौरान कंदों में अंकुरण फूटने में कमी आती है।

पैदावार: खरीफ फसल की पैदावार 150–200 क्विंटल/हेक्टेअर होती है। जोकि रबी फसल की तुलना में कम है। अच्छे प्रबंध से पैदावार को 250 क्विं./है. तक बढ़ाया जा

सकता है।

बैंगन की रैटूनिंग प्रौद्योगिकीः

भारत में बैंगन बहुत अधिक लोकप्रिय तथा व्यावसायिक रूप से महत्वपूर्ण शाकीय फसल है। इसकी खेती और खपत लगभग पूरे देश में होती है। फल के रंग, आकार तथा आकृति की क्षेत्रीय पसंद के अनुरूप देश में अनेक किस्मों और संकर किस्मों का विकास करके उनकी खेती की जाती है। कच्चे फलों का उपयोग सब्जी बनाने तथा भुने हुए, तले हुए और भरे हुए बैंगन के रूप में किया जाता है। बैंगन कैल्सियम, फास्फोरस, लौह और विटामिन ए,बी, सी के अच्छे स्त्रोत माने जाते हैं। इनके कुछ आयुर्वेदिक गुण भी हैं और मधुमेह रोगियों के लिए सफेद बैंगन अच्छे माने जाते हैं।

उत्तरी मैदानों में बैंगन की खरीफ फसल का रोपण जुलाई में किया जाता है और इससे नवंबर के अंत तक अच्छी तादाद में फल मिलते रहते हैं। लेकिन दिसंबर और जनवरी में कम तापमान होने के कारण फल आने बंद हो जाते हैं और पौधे की बढ़वार पूरी तरह से थम सी जाती है। बैंगन की गर्मियों की फसल को फरवरी के अंत में अथवा मार्च के पहले सप्ताह में रोपा जाता है जिससे मई के प्रारंभ में फल मिलने शुरू होते हैं। फलों के देर से लगने तथा गर्मी के मौसम में अत्याधिक गर्म महीनों के कारण कम उपज से यह फसल किसानों के लिए बहुत कम लाभदायक है। शाकीय विज्ञान संभाग, भा.कृ.अ.सं., नई दिल्ली द्वारा मानकीकृत रेटूनिंग प्रौद्योगिकी अपनाकर बसन्त–गर्मी मौसम में इस फसल से अतिरिक्त अगेती और लाभदायक उपज प्राप्त की जा सकती है। इसके लिए खेत में 3–4 हल्की सिंचाइयां करके दिसंबर तथा जनवरी के महीनों में खरीफ की खड़ी फसल को पाले और सर्दी से बचाया जा सकता है। जनवरी के अंतिम सप्ताह अथवा फरवरी के प्रथम सप्ताह में जब पाले का खतरा टल जाता है तब कैंची की सहायता से खड़ी फसल के पौधों की छंटाई करके सभी सूखी शाखाओं को हटा दिया जाता है और हरी शाखाओं को इस अनुपात में छांटा जाता है कि पौधे का केवल 30–40 सें.मी. भाग जमीन की सतह के ऊपर रहता है। बौनी किस्मों की छंटाई हल्की करनी चाहिए, जबकि लंबी तथा फैलने वाली किस्मों की छंटाई थोड़ी ज्यादा करनी चाहिए। इसके उपरांत निराई और गुड़ाई करनी चाहिए तथा मिट्टी में 150 कि.ग्रा./है. की दर से डाई–अमोनियम फॉस्फेट उर्वरक अच्छी तरीके से मिलाना चाहिए। फसल की आवश्यकता के अनुरूप समय–समय पर सिंचाई की जानी चाहिए।

छंटाई के 30–40 दिनों के उपरांत फलों की पहली तुड़ाई की जा सकती है। फलों को नियमित अंतराल पर तोड़ते रहना चाहिए, ताकि फसल में फल लंबे समय तक आते रहें। इस प्रौद्योगिकी से मध्य मार्च से फल मिलने लगते हैं, जिससे किसानों को ज्यादा लाभ मिलता है। आकलन के अनुसार गर्मियों में नए रोपित बैंगन की तुलना में रैटून फसल से 30–40 प्रतिशत अतिरिक्त उपज प्राप्त की जा सकती है। भा.कृ.अ.सं. की उन्नत किस्में यथा पूसा उत्तम, (गोलाकार फल), पूसा अंकुर एवं पूसा बिंदु (छोटे गोलाकार फल), पूसा क्रान्ति एवं पूसा पर्पल लांग (लंबे फल), पूसा हाइब्रिड–5 (लंबे फल), पूसा हाइब्रिड–6, पूसा हाइब्रिड–9 (गोलाकार फल) खरीफ मौसम में खेती के लिए उपयुक्त हैं और इनसे अगेती बसन्त व गर्मी के मौसम में रैटून प्रणाली द्वारा बेहतर परिणाम प्राप्त होते हैं।

कद्दु वर्गीय सब्जियों में संकर (हाइब्रिड) बीज उत्पादनः

कद्दू, लौकी, पेठा और चप्पन कद्दू में वाणिज्यिक स्तर पर संकर बीज उत्पादन किया जा सकता है और ऐसा फूलों के खिलने से पहले मादा वंशक्रम के पौधों से नर फूल की कलियों को निकालकर और नर वंषक्रम को मादा वंशक्रम के पास उगने देकर किया जा सकता है जिससे कि मधुमक्खियों या अन्य कीट परागण कर्ताओं द्वारा प्राकृतिक संकर परागण किया जा सकता है। इन फसलों में अन्य सब्जियों की तुलना में मादा फूल आकार में काफी बड़े, देखने में सुंदर और संख्या में कम होते हैं। मादा वंशक्रम के पौधों से नर पुष्पकलिका को निकालने का काम ऐसे किसी भी व्यक्ति द्वारा आसानी से किया जा सकता है जो कि नर और मादा फूलों को पहचानता है। इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि कोई भी नर फूल मादा वंशक्रम पर न रहे/खिल न सके। मादा वंशक्रम के पौधों से तोड़े गए पके हुए फलों से F1 बीज एकत्रित किया जाता है। यह वाणिज्यिक स्तर पर हाइब्रिड बीज उत्पादन का सरल और लाभप्रद तरीका है।

जायद के मौसम की सब्जियों की प्रमुख बीमारियॉ एवं कीट प्रबन्धन

फसल	प्रमुख बीमारियाँ एवं रोकथाम	प्रमुख कीट एवं रोकथाम
टमाटर	**डैम्पिंग आफ–** थीरम @ 3ग्राम/किग्रा. बीज या 1 ग्राम थीरम एवं 1 ग्राम कार्बन्डाजिम/किग्रा. बीज। **लीफ कर्ल विषाणु–** रोगर @ 2 मिली0/ली0 पानी या एसिटामिप्रिड 3–5 ग्राम/10 ली0 पानी। **लेट ब्लाइट–** रीडोमिल @ 1ग्राम/ली0 पानी।	**टमाटर फल छेदकः** टमाटर की प्रति 16 पंक्तियों पर ट्रैप फसल के रूप में एक पंक्ति गेंदे की फसल लगाए। 20 फेरोमोन ट्रैप प्रति हेक्टेयर लगाए नीम बीज अक्र (5 प्रतिशत) या एबामेक्टिन बेन्जोट 5 एस.जी. 1 ग्राम/2 लीटर या स्पिनोसैड 45 एस. सी. 1 मि.ली./4 लीटर पानी का इस्तमोल करें। **सफेद मक्खी–** रोपाई से पहले पौधों की जड़ों को आधे घंटे के लिए इमिडाक्लोप्रिड 1मि.ली./3 लीटर के घोल में डुबोए। नर्सरी को 40 मेस की नायलॉन नेट से ढक कर रखें। नीम बीज अर्क (4 प्रतिशत) का छिडक़ाव करें। पिली कीट चिपकने वाली ट्रैप का प्रयोग करें। ट्राइजोफॉस @ 1 मिली0/ली0 पानी या इमिडाक्लोप्रिड @ 4 मिली0/10 ली0 पानी या एसिटामिप्रिड 3–5 ग्राम/10 ली0 पानी।
मिर्च	**एन्थ्रैकनोज–** डाइथेन एम. – 45 @ 2ग्राम/ली0 पानी या ब्लाइटाक्स @ 2ग्राम/ली0 पानी। **लीफ कर्ल विशाणु–** मेटासिस्टाक्स @ 1.5 मिली0/ली0 पानी।	**एफिड–** रोगर @ 2 मिली0/ली0 पानी या एसिटामिप्रिड 3–5 ग्राम/10 ली0 पानी **माइट–** स्पाइरोमेसीफेन @ 2 मिली0/ली0 पानी।
बैंगन	**फोमोप्सिस ब्लाइटः** डायथेन एम–45 या रीडो. मिल 1.5–2 ग्राम प्रति लीटर पानी ।	**तना एवं फल छेदकः** 20 फेरोमोन ट्रेप प्रति हेक्टेयर। मैलाथियान 1.5 मि.ली. प्रति ली. या रोगर (डाईमेथोएट) दवा की 1.5 मि.ली. प्रति ली. पानी।
भिन्डी	**पीला मोजैकः** मेटासिस्टाक्स या मैलाथियान 1.5 मि.ली. प्रति लीटर पानी। दूसरा छिड़काव इमीडाक्लोपिड 0.25 मि.ली. दवा का प्रति लीटर पानी । **पाउडरी मिल्डयूः** घुलनशील सल्फर के 0.2 प्र. तिशत का छिड़काव।	**जैसिडः** स्पाइरोमेसीफेन दवा की 2 मिली0 प्रति ली. पानी में घोल बनाकर दूसरा छिड़काव करें। इमीडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. 1मि.ली./3 ली. या डेल्टोमेथरिन 2.5 ई.सी. 1 मि.ली./ली. पानी में मिलाकर छिड़काव करें। बुआई के समय कार्बोफयूरान (3जी) 1.0 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर। **फल तथा तना छेदकः** 20 फेरोमोन ट्रेप की प्रति हेक्टेयर। एमामेक्टिन बेन्जोएट (3 ग्रा./10 ली0) या स्पिनोसैड 1मि.ली./3 ली. पानी में मिला. कर छिड़काव करें। **लाल माइटः** इनका प्रकोप जायद के मौसम में अधिक होता है। डाइ. कोफाल या ओमाइट 2 मि.ली. प्रति लीटर पानी। स्पाइरोमेसीफेन दवा की 2 मली0. प्रति ली. पानी में घोल बनाकर दूसरा छिड़काव करें।
कद्दू वर्गीय	**चुर्णिल आसिता(पाउडरी मिल्ड्यू)** : कैराथेन 1 ग्राम प्रति ली. पानी अथवा बाविस्टीन 2 ग्राम प्रति ली. पानी। **मृदुरोमिल आसिता (डाउनी मिल्ड्यू)** : डायथेन एम–45 या रीडोमिल 1.5–2 ग्राम प्रति लीटर पानी । **फ्यूजेरियम विल्ट** : कैपटाफ 2.0 ग्रा./लीटर पानी में घोल बनाकर जड़ां में प्रयोग करें। फसल बदल–बदलकर बोएं 3 साल के फसल चक्र को अपनाए। **वायरस की बीमारीः** खरपतवार नियंत्रित करें तथा वायरस के संवाहक थ्रिप्स को नियंत्रण में रखें। इमीडाक्लोपरीड या फिप्रोनिल 4–5 मिली. प्रति 10 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें। पीला ट्रेप का प्रयोग करें।	**कद्दू वाला लाल भृंग** : यह कीट फसल की प्रारम्भिक अवस्था में पत्तियों का खाता है। इनसे बचाव के लिए फसल पर कार्बोसल्फान नामक कीटनाशी का 1.5 से 2.0 मिली. प्रति ली. की दर से घोल बनाकर सुबह के समय छिड़काव करें। फसल खत्म होने पर बेलो को खेत से हटाकर नष्ट कर दें । फसल की अगेती बुवाई से कीट के प्रभाव को कम किया जा सकता है। **फल मक्खी** : यह मक्खी फलों पर अण्डे देती है। बाद में लार्वा फलों में घुसकर उन्हें अन्दर से खाते रहते हैं। इस कीट से बचाव हेतु बेलों पर मेलाथियान 2.0 मि.ली./लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें। मखियों को आकर्षित कर मारने के लिए मीठे जहर, जो मेलाथियान 2.0 मि.ली./लीटर व 1 प्रतिशत चीनी/गुड (25 ग्राम/लीटर) से बनाया जा सकता है का 50 लीटर/ हक्टेयर की दर से छिडक़ाव करें। फल मक्खी के नरों को आकर्षित करने के लिए ''मिथाइल युजिनोल'' पाश का प्रयोग भी किया जा सकता है। इससे बचाव के लिए 25 फेरोमैन ट्रेप प्रति हेक्टेयर प्रयोग करना चाहिए।

टमाटर वर्गीय फसलें जैसे टमाटर, बैंगन, मिर्च, शिमला मिर्च में जड़ गांठ सूत्रकृमि *मेलोइडोगाईन इनकागनिटा* व *मेलोइडोगाईन जैवेनिका* हानि पहुंचाते हैं।

लक्षण : इनसे होने वाले रोग के लक्षणों में पत्तियों में पीलापन, पौधे बौने व पैबंदनुमा वृद्धि, जड़ां में छोटी और बड़ी गांठों का होना तथा फलों का आकार छोटा होना है।

प्रबंधन : नर्सरी में पौध उपचार–नर्सरी बेड को अच्छी तरह से तैयार करते समय कार्बोफ्यूरान 0.3 ग्राम सक्रिय तत्व प्रति वर्ग मीटर के लिए (3.3 ग्रा./वर्ग मी.) मिलायें और अथवा नर्सरी बेड को पॉलीथीन शीट से 3 सप्ताह तक गर्मियों मेंढ़क कर रखें। प्रतिरोधी किस्मों का प्रयोग करें। टमाटर की पूसा नीमायुक्त, पी.एन.आर.–7 और बैंगन की विजय हाइब्रिड, ब्लैक ब्युटी, ब्लैक राउंड तथा जौनपुरी लम्बा नामक किस्मों का प्रयोग करें। मई–जून में गर्मियों के दिनों में 15 दिन के अंतराल पर खेत की दो गहरी जुताई करें। फसल चक्र का प्रयोग करें तथा रबी फसल में जौ, सरसों, तोरी तथा अफ्रीका गेंदा का और धान, बाजरा तथा ज्वार की खरीफ में बुवाई करें। कार्बोसल्फान या ट्रायजोफॉस के 100 पी.पी.एम. का घोल बनाकर पौधे की जड़ां को डुबोकर उपचारित (15 मिनट) करके रोपाई करें।

एकीकृत कीट एवं रोग नियंत्रणः

- गर्मियो मे खेत की गहरी जुताई करें।
- पौधशाला की क्यारियँ भूमि धरातल से ऊंची रखे एवं फोर्मेल्डिहाइड द्वारा स्टरलाइजेशन करलें।
- क्यारियों को मार्च अप्रैल माह में पॉलीथीन शीट से ढके भू–तपन के लिए मृदा में पर्याप्त नमी होनी चाहिए।
- गोबर की खाद में ट्राइकोडर्मा मिलाकर क्यारी की मिट्टी में अच्छी तरह से मिला देना चाहिए।
- पौधशाला की मिट्टी को कॉपर ऑक्सीक्लोराइड के घोल से बुवाई के 2–3 सप्ताह बाद छिड़काव करें।
- पौध रोपण के समय पौध की जड़ां को कार्बेन्डाजिम या ट्राइकोडर्मा के घोल मे 10 मिनट तक डुबो कर रखें।
- पौध रोपण के 15–20 दिन के अंतराल पर चेपा, सफेद मक्खी एवं थ्रिप्स के लिए 2 से 3 छिड़काव इमीडाक्लोप्रिड या एसीफेट से करें। माइट की उपस्थिति होने पर ओमाइट का छिड़काव करें।
- फल भेदक इल्ली एवं तम्बाकू की इल्ली के लिए इन्डोक्साकार्ब या प्रोफेनोफॉस का छिड़काव करना चाहिए।

कीटनाशकों के छिड़काव के बाद सब्जी फलों को तोड़ने का सुरक्षित समय (दिनों में)

कीटनाशक का नाम	बैंगन	टमाटर	भिंडी	बंद गोभी	फूल गोभी
क्युनलफॉस	3–12	1	3–7	–	7–11
क्लोरोपाइरीफॉस	1–2	–	–	10–13	–
लेम्बडा–साइहेलोथ्रिन	1–3	–	3	–	1
बीटा–साइफ्लुथ्रिन	1–3	–	5	–	–
साइपरमेथ्रिन	5	1–3	4–6	3–10	1–3
डेल्टामेथ्रिन	2 1		2	1–5	1–2
फेनवालरेट	2	3	2–8	1–3	1–4
मेलाथियान	3	1	3	–	–
इमिडाक्लोप्रिड	–	2	5	–	3

इसी प्रकार यदि किसान उपर्युक्त अत्यधिक पैदावार देने वाली नई–नई प्रजातियों विशेषकर रोग रोधित एवं संकर प्रजातियों के बीज लगाने के साथ, सब्जी लगाने की नई विधियों, खरपतवार एवं बीमारियों तथा कीडों की रोकथाम के लिये उपलब्ध नये रासायनिक दवाओं, सिंचाई के आधुनिक तरीकों जैसे स्प्रिंकलर एवं ड्रिप सिंचाई पद्ध तियों का उपयोग अपनी खेती में करें, तो वे अपनी कृषि में आने वाली लागत को कम करके उससें कई गुणा अधिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं।

जायद मे मूंग की उन्नत खेती

लोकेश कुमार जैन, हरीश कुमार[1] एवं के. एस यादव[2]
सहायक प्राध्यापक (शस्य विज्ञान)
कृषि महाविद्यालय, सुमेरपुर
(कृषि विश्वविद्यालय, जोधपुर)
[1व2]एटिक, भा.कृ.अनु. संस्थान पूसा नई दिल्ली–12

वर्तमान समय की प्राथमिक आवश्यकता अर्थात टिकाऊ खेती के लिए दलहनी फसलों को फसल–प्रणाली में समावेष करना अति आवश्यक है। दलहनी फसलें वायुमण्डलीय स्वतंत्र नत्रजन को राईजोबियम जीवाणु से भूमि में स्थिरीकृत करती हैं तथा पर्याप्त मात्रा में भूमि में कार्बनिक पदार्थ की आपूर्ति करती हैं फलस्वरूप मृदा की भौतिक, रासायनिक तथा जैविक दशाओं में सुधार होता है। अतः मृदा की स्वास्थय में सुधार एवं ग्रीष्म ऋतु में मृदा क्षरण रोकने हेतु मूंग की खेती चना, मटर, गेहूं, सरसों, आलू, जौ, अलसी आदि फसलों की कटाई के बाद खाली हुए खेतों में की जा सकती है। मूंग की फसल अवधि कम होने के कारण यह नगदी फसल, अन्तवर्ती फसल एवं रिले फसल के रूप में आदर्श फसल मानी जाती है। ग्रीष्म ऋतु में मूंग की खेती करके अतिरिक्त आय एवं रोजगार के अवसर भी प्राप्त की जा सकते है। मूंग सबसे कम अवधि (65–70 दिन में) तैयार होने वाली तथा तथा प्रोटीन प्रदान करने वाली एक असाधारण फसल है। ग्रीष्मकालीन मूंग की खेती केवल सिंचित क्षेत्रों में ही की जा सकती है। धान–गेहूं फसल चक्र वाले क्षेत्रों में जायद मूंग की खेती द्वारा मृदा उर्वरता को उच्च स्तर पर बनाये रखा जा सकता है। ग्रीष्मकालीन मूंग की फसल से खरीफ की तुलना में प्रायः ज्यादा उत्पादन प्राप्त होता है क्योकि खरीफ की फसल में कीट–पतगों और रोगों से क्षति ज्यादा होती है तथा वर्षा काल में कभी पानी की अधिकता व कमी भी फसल को नुकसान पहुचाती है। मूंग की औसत उपज बहुत कम है क्योंकि यह फसल कम उपजाऊ भूमि में बोई जाती रही हैं। अन्तर्वर्ती खेती करना अत्यन्त लाभदायक रहता है ऐसा करने पर मूंग के लिए अतिरिक्त उर्वरक की आवश्यकता नहीं पड़ती है। फिर भी वर्तमान किस्मों के साथ यदि खेती की नवीनतम तकनीकी उन्नत तरीकों को अपनाया जाये तो इन फसलों की उपज काफी हद तक बढ़ाई जा सकती है व बेहतर पैदावार प्राप्त कर सकते हैं।

खेत की तैयारी : बुवाई से पहले खेत अच्छी तरह तैयार करें। खेत में उचित नमी होने पर ही बुवाई करें। भुरभुरे, बारीक व चूर्णिल खेत को मूंग की खेती के लिए अच्छा माना जाता है। 2–3 जुताई हैरों से करें। जुताई के तुरन्त बाद नमी क्षरण को कम करने के लिए पाटा लगा देना चाहिए। गेहूँ की कटाई के बाद पलेवा देकर खेत तैयार कर लें।

भूमि उपचार : भुमिगत कीडों यथा कातरा, सफेद लट एवं दीमक की रोकथाम के लिए खेत की पूरी सफाई जैसे सूखे डण्टल आदि इकठ्ठे कर हटा देना, कच्चा खाद का प्रयोग न करना आदि काफी सहायक होते हैं। जड़ गलन रोग नियन्त्रण हेतु बुवाई के पहले 2.5 किलो ट्राइकोडर्मा को 1.0 क्विटण्ल गोबर की खाद के साथ मिलाकर मिट्टी में मिलायें।

उन्नतशील ग्रीष्मकालीन प्रजातियाँ : विगत 15–20 वर्षो में मूंग की लगभग दो दर्जन से ज्यादा किस्में विकसित हुई हैं। किस्मों का चयन क्षेत्रों के अनुसार करें। किस्मों का चयन, संतुलित पोषक तत्व तथा समय पर फसल सुरक्षा पर ध्यान दें तो मृदा की दशा में सुधार के साथ–साथ अच्छी आय भी प्राप्त की जा सकती है। इनमें अधिकांश प्रजातिया उच्च पैदावार देने वाली, शीघ्र पकने वाली, प्रायः फलियां एक साथ पकने वाली तथा बड़े आकार के दाने वाली हैं। इनमें से अधिकांश प्रजातियां प्रमुख रोगों और कीटों के प्रति अवरोधी हैं। जिनकी तुड़ाई एक बार में ही कर ली जाती है। इसके अलावा ये ये नवीनतम प्रजातियां अधिक उत्पादन देने वाली भी हैं। इनकी उत्पादन क्षमता कुशल फसल प्रबंधन के अंतर्गत 10–12 क्विंटल प्रति

हैक्टेयर है। ये प्रजातियां परम्परागत प्रजातियों की अपेक्षा 15–20 प्रतिशत तक अधिक उपज देती हैं।

आर.एम.जी.–62 :– इस किस्म के पौधे मध्यम ऊंचाई वाले सीधे होते हैं, तथा बीज चमकदार व हल्के रंग के होते हैं। औसत उपज 10–12 क्विण्टल/हैक्टेयर है। यह किस्म खरीफ एवं जायद दोनो ही ऋतुओं के लिये उपयुक्त है। 70–75 दिन में पक कर तैयार हो जाती है। यह किस्म पीले मौजेक वायरस बीमारी के प्रति मध्यम रूप से प्रतिरोधक है। उपयुक्त परिस्थितियों में 15–16 क्विण्टल प्रति हैक्टर उपज देने की क्षमता रखती है। सिंचित व असिंचित क्षेत्रों के लिये उपयुक्त है।

एस एम एल – 668 :– इस किस्म के पौधों में 40–42 दिनों में फूल आने लगते हैं। इसकी पत्तियां चौडी तथा गहरे हरे रंग की होती है। इसके दाने सुडौल तथा बड़े आकार के होते हैं। इसकी औसत उपज 7–8 क्विण्टल प्रति हैक्टर है। तना मोटा व मजबूत होने के कारण पौधे गिरते नहीं हैं।

एस एम एल–334 :– 68 दिन में पककर तैयार हो जाती है। इसकी औसत उपज 11.0 क्विण्टल प्रति हैक्टर है। यह किस्म पीले मौजेक वायरस बीमारी के प्रति प्रतिरोधक है।

आर.एम.जी–268 :– यह किस्म खरीफ एवं जायद दोनो ही ऋतुओं के लिये उपयुक्त है। इसकी फलियाँ पकने तक हरी रहती है तथा एक साथ पकती है। औसत उपज 10–12 क्विण्टल/हैक्टेयर है। यह सूखे तथा जालिका झुंलसा रोग रोधी है। 65–70 दिन में पककर तैयार हो जाती है।

आर.एम.जी. 492 :– यह किस्म जायद ऋतु के लिये अति उपयुक्त है। इसकी औसत उपज 7.5–9.25 क्विण्टल/हैक्टेयर है। 65–70 दिन में पककर तैयार हो जाती है।

आई.पी. एम. 99–125 :– यह किस्म जायद ऋतु के लिये उपयुक्त है। इसकी औसत उपज 9.8 क्विण्टल/हैक्टेयर है। 66 दिन में पककर तैयार हो जाती है।

आई.पी. एम. 02–3 :– यह किस्म जायद ऋतु के लिये भी उपयुक्त है। इसकी औसत उपज 11.0 क्विण्टल/हैक्टेयर है। 62–68 दिन में पककर तैयार हो जाती है।

आई.पी. एम. 02–14 :– यह किस्म जायद ऋतु के लिये भी उपयुक्त है। इसकी औसत उपज 11.0 क्विण्टल/हैक्टेयर है। 60–65 दिन में पककर तैयार हो जाती है। किस्म पीले मौजेक वायरस बीमारी के प्रति मध्यम रूप से प्रतिरोधक है।

पूसा विशाल:– उत्तर पश्यिम के समतल क्षेत्रो बसन्त/ग्रीष्म ऋतुओं में बुवाई के लिए उपयुक्त है। इसकी फलियां एक साथ पकती हैं। औसत उपज 12 कु./है. है। मूंग के पीले मोजैक विषाणु के लिए प्रतिरोधी है। बसंत में एक ही अवधि 65 से 70 दिन में पकने वाली है तथा ग्रीष्म में 60 से 65 दिनों में पककर तैयार हो जाती है।

पूसा 9531:– इसके दाने मध्यम आकार के हरे व चमकदार, एक साथ पकने वाले होते हैं। ग्रीष्म व खरीफ मौसम के लिए उपयुक्त तथा मध्यप्रदेश के लिए उपयोगी है। 60–65 दिनों की फसल हैं तथा 12–14 क्विंटल प्रति हैक्टेयर पैदावार है।

पी डी एम–11 :–यह पीला मोजैक रोग के प्रति अवरोधी है। उच्च तापमान के प्रति सहनशील है एवं इसकी फलियां नहीं चटकती हैं। 60–65 दिनों में पकती है तथा 10–15 क्विंटल प्रति हैक्टेयर पैदावार देती है।

गंगोत्री (गंगा 8) :– खरीफ व जायद मौसम में बुवाई के लिए उपयुक्त यह किस्म लगभग 72 दिन में पककर तैयार हो जाती है। इसके पौधों की ऊंचाई लगभग 80–85 सेमी होती है। यह किस्म पीला मोजेक वारयस बीमारी के प्रति मध्यम रूप से प्रतिरोधक है। इसकी औसत उपज 3 से 3.5 क्विंटल प्रति बीघा है।

जमनोत्री (गंगा–1):–यह किस्म औसतन 76 दिनों में पककर तैयार हो जाती है। यह किस्म पीला मोजैक वायरस के प्रति सहनशील है। सामान्य परिस्थितियों में इसकी औसत उपज लगभग 13.5 क्विंटल प्रति हैक्टर है। यह किस्म जायद ऋतु में भी बुवाई के लिए उपयुक्त है।

उपरोक्त किस्मों के अतिरिक्त एच.यू.एम. 2, एच.यू.एम. 6, एच.यू.एम. 12, टी. एम.बी. 37 आदि भी जायद ऋतु के लिए उपयुक्त पायी गई हैं।

बीज दर तथा बुआई का समय : ग्रीष्मकालीन मूंग की बिजाई का उत्तम समय मार्च है परन्तु बिजाई का कार्य 15 अप्रैल तक पूर्ण कर लेना चाहिए। इसके बाद इसकी बिजाई न करें वरना मानसून के आने से पहले फसल की कटाई नहीं हो सकेगी और मानसून की वर्षा से इसके नश्ट हो जाने का डर रहेगा। समय पर बोई गयी फसल की कटाई 15 जून से पहले हो जाती है। सीड ड्रिल या देशी हल के पीछे नाई बॉधकर केवल पंक्तियों में ही बुवाई करना चाहिए। ग्रीष्म ऋतु में कम वृद्धि के कारण पौधों को पास–पास बोते हैं। ग्रीष्मकालीन मूंग की बुआई हेतु 22–25 कि.ग्रा बीज प्रति हैक्टर उपयुक्त है। बीज को 4–5 से.मी. की गहराई पर बोना चाहिए और पंक्ति से पंक्ति की दूरी 22–25 से.मी. तथा दो पौधों की आपसी दूरी 5 से.मी. रखते हैं।

बीज उपचार : बीज को 3 ग्राम थाइरम या 2 ग्राम कार्बेण्डाजिम प्रति किलो बीज की दर से उपचारित करें। मूंग में रस चूसक कीटों की रोकथाम के लिये 5 मिली, इमिडाक्लोरेप्रिड 600 एफ.एस. प्रति किलो बीज से उपचारित करें। उपचारित करके बुआई करने से फसल को पौध व तना विगलन तथा पीला चितेरी विषाणु रोग को फैलाने वाले कीट सफेद मक्खी से लगभग 20–22 दिन तक नुकसान की संभावन कम रहती है।

राइजोबिया कल्चर से उपचार :– सभी दलहनी फसलों के बीजों को राइजोबिया शाकाणु संवर्ध से मिलाने पर पैदावार अधिक होती है। राइजोबियम जैविक उर्वरक के प्रयोग द्वारा मूंग की पैदावार में 15–20 प्रतिशत की वद्धि हो सकती है। इसके उपचार के लिये 250 ग्राम गुड़ को एक लीटर पानी में गरम करके घोल बनायें तथा घोल के ठण्डा होने पर इसमें 600 ग्राम शाकाणु संवर्ध मिलायें। इस मिश्रण में एक हैक्टेयर में बोये जाने वाले फसल के बीज को इस प्रकार मिलायें कि सभी बीजों पर इसकी परत एकसार चढ़ जायें इसके बाद इन बीजों को छाया में सुखा कर शीघ बोने के काम में लेवें।उपयोग करने से पूर्व राइजोबिया संवर्ध को ठंडी जगह पर रखें।

फॉस्फोरस विलेयक जीवाणु खाद का प्रयोग :–पौधों की उचित वृद्धि हेतु नत्रजन के साथ फॉस्फोरस उर्वरक भी महत्वपूर्ण है। इसकी आपूर्ति पौधों को सुपर फास्फेट तथा डी.ए.पी. उर्वरक के माध्यम से पौधों को कराई जाती है। जितनी भी मात्रा में भूमि को फास्फोरस उपलब्ध कराया जाता है उसका 20–25 प्रतिशत ही घुलनशील अवस्था में पौधों को उपलब्ध हो पाता है। शेष 75–80 प्रतिशत भाग भूमि में अघुलनशील अवस्था में फास्फोरस यौगिकों के रूप में स्थिर हो जाता है। जिसे पौधे ग्रहण नहीं कर पाते हैं फलस्वरूप उत्पादन कम होता है। मृदा में ऐसे कई लाभकारी सूक्ष्मजीव मौजुद होते है जो इस प्रकार अघुलनशील रूप में स्थित फास्फोरस को घुलनशील अवस्था में परिवर्तित कर पौधों के ग्रहण करने योग्य बनाते हैं। फास्फोरस विलेयक जीवाणु ऐसे ही जीवाणुओं का समूह है जो लिग्नाईट धारा माध्यम में मिश्रित कर बीजोपचार हेतु उपलब्ध कराया जाता है। इसके प्रयोग से अधिक उत्पादन प्राप्त होता है। फंफुदनाशी, कीटनाशी और राईजोबियम कल्चर से बीज उपचार उपर्युक्त क्रम में ही करें। यहाँ यह जानकारी अति आवश्यक है कि बीज को बीजोपचार कवकनाशी–कीटनाशी एवं राईजोबियम कल्चर के क्रम में ही करना चाहिए। राईजोबियम कल्चर हमेषा विश्वसनीय तथा प्रमाणित संस्थानों और कृषि विश्वविद्यालयों से ही लें।

उर्वरक प्रबन्धन : खेत की मिट्टी की जांच के बाद ही खाद एवं उर्वरकों की मात्रा सुनिश्चित की जानी चाहिए। मूंग की फसल के लिए नाइट्रोजन, फास्फोरस व पोटाश की सम्पूर्ण मात्रा बुवाई के समय प्रयोग करनी चाहिए। अपेक्षित उपज प्राप्त करने के लिए पोषक तत्वों का संतुलित प्रयोग करना आवश्यक है। मूंग के लिए 20 कि.ग्रा. नत्रजन, 40 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा 20 कि.ग्रा. गन्धक प्रति हैक्टर की सिफारिश की जाती है। बुआई से पूर्व अन्तिम जुताई पर खेत में 100 कि.ग्रा. डाई अमोनियम फास्फेट के प्रयोग से अपेक्षित नत्रजन व फॉस्फोरस की मात्राा उपलब्ध हो जाती है, जबकि गन्धक की पूर्ति जिप्सम, पाइराइट अथवा सिंगल सुपर फास्फेट से की जा सकती है। दलहनी फसलों के भरपूर उत्पादन के लिए गन्धक की सुझाई गयी मात्रा का प्रयोग जरूर करें। उर्वरकों का प्रयोग फर्टीसीड ड्रिल या हल के पीछे चोंगा बांधकर कूड़ों में बीज से 2–3 से0मी0 नीचे एवं 3–4 से0मी0 साइड में ही करना चाहिए।

सिंचाई : पलेवा करके बुआई के बाद पहली सिंचाई 25–28 दिनों पर तथा दूसरी 35–38 दिनों पर करें।

आवश्यकता होने पर 45–48 दिनों पर तीसरी सिंचाई भी करें। अतः मौसम और मृदा की किस्म के आधार पर 2–3 सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। पलेवा के अतिरिक्त फसल की आवश्यकता के अनुसार 3–4 सिंचाई करनी चाहिए।

निराई–गुडाई एवं खरपतवार नियन्त्रण : ग्रीष्मकालीन मूंग की फसल में खरपतवारों की कोई विषेश समस्या नहीं रहती है। सामान्यतः फसल की वृद्धि के साथ ही कई प्रकार के चौड़ी व संकरी पत्तियों वाले खरपतवार उग आते हैं, जो फसल को दिए गए पोषक तत्वों व पानी का अवषोशण कर लेते हैं, जिससे मूंग की पैदावार और गुणवत्ता में कमी आ जाती है। इस प्रकार किसान को अपनी फसल का अपेक्षित लाभ नहीं मिल पाता है। यदि खेत में खरपतवार अधिक हैं तो बोवाई के 20–25 दिन के बाद निराई कर देना चाहिए। श्रमिकों की कमी और दैनिक मजदूरी में वृद्धि से यान्त्रिक विधियों द्वारा खरपतवार को नियन्त्रित करना, रासायनिक विधियों की तुलना में अधिक महंगा है। मूंग, की फसल में खरपतवार नियन्त्रण हेतु बुवाई से पूर्व एक लीटर सक्रिय तत्व प्रति हैक्टेयर फ्ल्यूक्लोरोलिन काम में लेवे या पेन्डिमेथिलीन 30 प्रतिशत ई.सी. 0.75 किग्रा. सक्रिय मात्रा को 1000 लीटर पानी में घोलकर अंकुरण से पहले व फसल बोने के 1–2 दिनों के अन्दर एक हेक्टेयर में छिड़काव करना लाभप्रद रहता है।

कटाई एवं मड़ाई : फलियों के झड़कर गिरने से होने वाले हानि को रोकने के लिये फलियों के झडने से पहले काट दें। जब 70–80 प्रतिशत फलियॉ पक जाएं हॅसिया से कटाई आरम्भ कर देना चाहिए। तत्पश्चात वण्डल बनाकर फसल को खलिहान में ले आते हैं। इसके बाद एक सप्ताह या दस दिन तक सुखाये और बैलों की दायें चलाकर या थ्रेसर द्वारा भूसा से दाना अलग कर लेते हैं।

उपज : उपर्युक्त विधि से खेती कर 10–12 कुन्तल प्रति है. की उपज प्राप्त की जा सकती है।

भण्डारणः धूप में अच्छी तरह सुखाने के बाद जब दानों में नमी की मात्रा 8–9 या कम रह जाये, तभी फसल को भण्डारित करना चाहिए।

बीज की गुणवत्ता में बीजोपचार का महत्व

अतुल कुमार, नागमणी सांद्रा एवं ज्ञान प्रकाश मिश्र
बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संभाग, आनुवंशिकी संभाग
भा.कृ.अ.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

बीजोपचार एक सस्ती तथा सरल तकनीक है, जिसे करने से किसान भाई बीज जनित एवं मृदा जनित रोगों से अपनी फसल को खराब होने से बचा सकते हैं। इस तरीके में बीज को बोने से पहले फफूंदनाशी या जीवाणुनाशी या परजीवियों का उपयोग करके उपचारित करते हैं। भारत एक उष्ण कटिबंधीय प्रदेश है। उष्ण प्रदेश होने के कारण यहाँ रोगों एवं कीटों का प्रकोप अधिक होता है जिससे उपज को बहुत अधिक नुकसान होता है। उन्नत प्रजातियों के प्रयोग, पर्याप्त उर्वरक देने व सिंचाई के अतिरिक्त यदि पौध संरक्षण के उचित उपाय न किये जाये तो फसल की अधिकतम उपज नहीं मिल सकती है। हमारा देश कृषि प्रधान देश हैं, जिनमें छोटे किसानों की संख्या ज्यादा है। जिनके पास छोटे–छोटे खेत हैं और प्रायः खेती ही उनके जीवन–यापन का प्रमुख साधन है। आधुनिक समय में खाधान्न की मांग बढ़ती जा रही है तथा आपूर्ति के संसाधन घटते जा रहे है। जिससे प्रौद्योगिकी चुनौतीपूर्ण की अपेक्षा ज्यादा जटिल हो गयी है। विज्ञान के नवीन उपकरणों, तकनीकों, तरीकों तथा प्रयोगों से किसानों की स्थिति मे सुधार हुआ है तथा नवीन तकनीकों के प्रयोग करने से उनकी जीवन शैली में तीव्र बदलाव आये हैं इसी को ध्यान में रखते हुए किसान नई–नई तकनीकों का उपयोग करके उत्पादन तथा उत्पादकता को बढ़ा सकते है। इन्हीं में से एक तकनीक बीजोपचार है। जिसको सुनियोजित तरीके से अपनाने से खेती की उत्पादकता बढ़ सकती है।

बीज की गुणवत्ता को बनाये रखने के लिए बीजोपचार करना अति मत्वपूर्ण है, जैसे बच्चे को सही समय पर टीका नहीं लगने पर जीवन भर बहुत सारी बिमारियों का खतरा बना रहता है वैसे ही अगर पौधे का टीकाकरण, जो की यहाँ पर बीजोपचार से है, ना किया जाये तो बहुत सारे रोगों के आक्रमण होने का भय बना रहता है।

बीजोपचार करने के लिए निम्नलिखित विधियाँ हैः–

1. **जीवाणु बीजोपचारः** इस विधि मे सुक्ष्म परजीवीनाशी जैसे *ट्राइकोड्रमा विरिडी, ट्राइकोड्रमा हारजिएनम, स्यूडोमोनास, फ्लोरेसेंस* इत्यादि का उपयोग करके बीज को उपचारित करते हैं।

2. **स्लरी बीजोपचारः** यह विधि समय की बचत वाली विधि है। इस विधि से बीज बुआई के लिए जल्दी तैयार हो जाते हैं। इसमें अनुशंसित मात्रा की दवा के साथ थोड़ा पानी मिलाकर पेस्ट बना लेते हैं। इस पेस्ट को बीज में मिलाकर छाया में सुखा लेते हैं सूखे हुए बीजों से यथाशीघ्र बुआई करते हैं। इस विधि द्वारा बीज कम समय में बुआई के लिए जल्दी तैयार हो जाते हैं।

3. **सूखा बीजोपचारः** इस विधि में बीज को अनुशंसित मात्रा की दवा के साथ सीड ड्रेसिंग ड्रम में डालकर अच्छी तरह हिलाते हैं जिससे दवा का कुछ भाग प्रत्येक बीज पर चिपक जाए। सीड ड्रेसिंग ड्रम का उपयोग तब करते है, जब बीज की मात्रा ज्यादा होती है। अगर बीज सीमित मात्रा में है तो सीड ड्रेसिंग ड्रम के स्थान पर मिट्टी के घड़े का प्रयोग कर सकते हैं। सीड ड्रेसिंग ड्रम या मिट्टी के घड़े में बीज की मात्रा दो तीहाई से ज्यादा नहीं रहनी चाहिए।

4. **भीगा बीजोपचारः** इस विधि का उपयोग सब्जियों के बीजों के लिए ज्यादा फायदेमंद होता है। इस विधि में अनुशंसित मात्रा की दवा का पानी में घोल बना कर बीज को कुछ समय के लिए उसमें छोड़ देते हैं तथा, कुछ समय पश्चात् छायादार स्थान में 6–8 घंटे सुखाकर यथाशीघ्र बुआई करते हैं।

5. **गर्म जल द्वारा बीजोपचारः** यह विधि जीवाणु एवं विषाणुओं की रोकथाम के लिए ज्यादा लाभदायक है। इस विधि में बीज या बीज के रुप में प्रयोग होने वाले

पादप भाग जैसे कंद को 52–54^{0}c तापमान पर 15 मिनट तक रखते हैं। जिससे रोगजनक नष्ट हो जाते हैं लेकिन बीज अंकुरण पर कोई विपरीत प्रभाव नहीं पड़ता है।

6. **सूर्यताप द्वारा बीजोपचारः** यह विधि गेहूँ, जौ एवं जई जिनमें अनावृत कंडवा रोग लगता है, उसके नियंत्रण के लिए लाभदायक है। इस विधि में बीज को पानी में कुछ समय (3–4 घंटे) के लिए भिगोते हैं और फिर सूर्यताप में 4 घंटे तक रखते हैं बीज के आंतरिक भाग में रोगजनक का कवकजाल नष्ट हो जाता है। रोगजनक को नष्ट करने के लिए रोगजनक की सुषुप्तावस्था को तोड़ना होता है, जिससे रोगजनक नाजुक अवस्था में आ जाता है, जो कि सूर्य की गर्मी द्वारा नष्ट किया जा सकता है। यह विधि गर्मी के महीने (मई–जून) में कारगर सिद्ध हुई है।

7. **राईजोबियम कल्चर से बीजोपचारः** इस विधि में खरीफ की पाँच मुख्य फसलों (अरहर, उड़द, मूंग, सोयाबीन एवं मूंगफली), तथा रबी की तीन दलहनी फसलें (चना, मसूर तथा मटर) में राईजोबियम कल्चर से बीजोंपचारित कर सकते हैं। 100 ग्राम कल्चर आधा एकड़ जमीन में बोये जाने वाले बीजों को उपचारित करने के लिए प्रर्याप्त होता है। इस विधि में 1.5 लीटर पानी में लगभग 100 ग्राम गुड़ डालकर खूब उबाल लेते हैं। ठण्डा होने पर एक पैकेट कल्चर डालकर अच्छी तरह मिला लेते हैं। इस कल्चरयुक्त घोल के साथ बीजों को इस तरह मिलाते हैं कि बीजों पर कल्चर की एक परत चढ़ जाए। उपचारित बीजों को छाया में सुखा कर यथाशीघ्र बुआई करते हैं।

बीज उपचार के लिए अनुशंसा

क्र. सं.	फसल का नाम	प्रमुख रोग एवं कीट	रसायन/जैवनाशी का नाम	रसायन/जैवनाशी की मात्रा (ग्राम/किलो बीज)
1.	गेहूँ	अनावृत कंड	कार्बोक्सीन 37.5 प्रतिशत + थीरम 37.5 प्रतिशत	2.5
		अन्टसेरिया पत्र लॉक्षण, अंगमारी हेल्मिंथेस्पोरियम	कारबेंडाजिम	2
		दीमक	क्लोरिपारीफॉस 20 ई0सी0	5 मि0ली0
2.	धान	झुलसा/बलास्ट, पत्र लाँक्षण भूरी चित्ती रोग, धड़ सड़न	कारबेंडाजिम कैप्टॉन	2 2
		जीवाणु पर्ण अंगमारी	स्यूडोमोनास फ्रोरेसेस 0.5% WP	10
		दीमक	क्लोरपारीफॉस 20 ई0सी0	3 मि0ली0
3.	अरहर, चना, मसूर, मूंग	उकठा रोग	कारबेंडाजिम /थीरम	2/3
		उकठा एवं झुलसा	ट्राईकोड्रमा विरिडी 1% WP	9
		दीमक	क्लोरिपारीफॉस 20 ई0सी0	5 मि0ली0
4.	मक्का	हेल्मिंथेस्पोरियम, षीथ ब्लाइट	थीरम/कैप्टॉन	3
5.	मूंगफली	बीज एवं मिट्टी जनित रोग	कारबेंडाजिम /थीरम	2/3
6.	सरसों	श्वेत कीट्ट	कारबेंडाजिम /थीरम	2/3
7.	तीसी	उकठा रोग	थीरम	3
8.	गन्ना	लाल सड़न रोग	कारबेंडाजिम /थीरम	2/3
			ट्राईकोड्रमा विरिडी	6

साग–सब्जियाँ

क्र.सं.	फसल का नाम	प्रमुख रोग एवं कीट	रसायन/जैवनाशी का नाम	रसायन/जैवनाशी की मात्रा (ग्राम/किलो बीज)
1.	गाजर, प्याज, मूली	बीज एवं मिट्टी जनित रोग	कारबेंडाजिम	2
2.	बैगन	जीवाणु मुरझा रोग	स्यूडोमोनास फ्लोरिसेंस 0.5% WP	10
3.	शिमला मिर्च	जड़ सूत्रकृमि	स्यूडोमोनास फ्लोरिसेंस	10
4.	मटर	उकठा रोग	कैप्टॉन/थीरम	3
5.	भिण्डी	उकठा रोग	कैप्टॉन/थीरम	3
6.	गोभी	मृदुरोमिल आसिता	कारबेंडाजिम	2
		मिट्टी एवं बीज जनित रोग	ट्राईकोड्रमा विरिडी 1% WP	4–5
		जड़ सूत्रकृमि	स्यूडोमोनास फ्लोरिसेंस 0.5% WP	10
7.	आलू	मिट्टी एवं कंद जनित रोग	मेंटालैक्सिल + मान्कोजेब	2
8.	टमाटर	उकठा	कारबेंडाजिम	2
			स्यूडोमोनास फ्लोरिसेंस 0.5% WP	10
10.	मिर्च	मिट्टी जनित रोग	ट्राईकोड्रमा विरिडी 1% WP	4–5
		जैसिड, एफीड, थ्रीप्स	इमिडाक्लोरपिड 70 WS	2 मि.ली.

1. **पौधा उपचारः** इस विधि द्वारा मुख्यतः धान, टमाटर, बैंगन, गोभी, मिर्च इत्यादि के पौधों को जीवाणु रोगों से बचाया जाता है। इस विधि में रोपाई से पहले पौधों की जड़ां को एंटीवायोटिक (एस्ट्रेप्टोसाईक्लिन) के घोल में डुबो कर उपचारित करते है।

बीजोपचारित करने की विधिः

बीज उपचारित करने के लिए सर्वप्रथम एफ.आई.आर. क्रम याद रखना चाहिए। बीज को सर्वप्रथम फफूंदनाशी से उसके बाद कीटनाशी से (2 घंटे बाद) और अन्त में राईजोबियम कल्चर से (4 घंटे बाद) उपचारित करें। कवकनाशी, कीटनाशी तथा जैविक नियंत्रण क्रम गैर दलहनी फसलों पर लागू करनी चाहिए।

सावधानियाँः

- ❖ बीज उपचारित करने के लिए निर्धारित मात्रा का ही प्रयोग करें।
- ❖ बीजोपचार करने के बाद बीज को छायेदार जगह में ही सुखाए।
- ❖ रसायनों के प्रयोग से पहले उसकी एक्सपायरी तिथि अवश्य जांच लें।
- ❖ उपचार के बाद डिब्बों तथा थैलों को मिट्टी के अंदर अवश्य दबा दें तथा अच्छी तरह साबुन से हाथ धो लें।
- ❖ रसायनों को बच्चों तथा मवेशियों की पहुंच से दूर रखें।
- ❖ रसायनों के प्रयोग के समय न तो कुछ खायें, न ही धूम्रपान करें।
- ❖ दवा को उसके मूल डिब्बे में रखें तथा उसका लेबिल खराब न होने दें। खाद्य, जल या शराब के डिब्बों पर कीटनाशक रसायन को कभी न भरें।

निष्कर्षः

- ❖ यह एक सस्ती तथा सरल विधि है।
- ❖ कोई भी किसान भाई बड़ी आसानी से इस विधि को अपना सकते हैं।
- ❖ रसायनिक पदार्थों का प्रयोग इस विधि में कम से कम होता है।
- ❖ बीजोपचार करने के बाद खड़ी फसल में सुरक्षा के अन्य उपायों की कम आवश्यकता पड़ती है।
- ❖ फसल उत्पादन में इस विधि द्वारा किसान भाईयों को 15–20 प्रतिशत तक मुनाफा मिलता है।

व्यवसायिक खेती के लिये फलों की नवीन किस्में

संजय कुमार सिंह, कन्हैया सिंह एवं अनिल कुमार दूबे
फल एवं औद्यानिकी प्रौद्योगिकी संभाग
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान सस्थान, नई दिल्ली–110012

भारत के विभिन्न क्षेत्रों की जलवायु एवं मिट्टी में विविधता होने से देश में लगभग सभी प्रकार के फलों की बागवानी की जा सकती है। भारत में फलों की बागवानी पुराने समय से की जा रही है परन्तु वर्तमान में प्रति इकाई क्षेत्र से अधिक आय होने के कारण औद्यानिकी फसलों को व्यावसायिक स्तर पर उगाया जा रहा है। वर्ष 2018–19 में देश में फल की खेती 6.4 मीलियन हेक्टेयर क्षेत्रफल में तथा उत्पादन 94.88 मीलियन टन था जो कि विश्व के कुल फल उत्पादन का 10 प्रतिशत है। फलों की उत्पादकता को बढ़ाने में फलवृक्षों की नवीन उन्नत किस्मों का महत्वपूर्ण योगदान है। यदि प्रारम्भ में किन्हीं कारणों से अच्छी गुणवत्तायुक्त किस्मों के पौधे नहीं रोपे गये हों, तो बाद के वर्षों में इनका सुधार नहीं हो पाता, तथा कई दशकों तक आर्थिक क्षति उठानी पड़ती है। फलोत्पादन को व्यावसायिक रूप से व वैज्ञानिक तरीकों को अपनाकर और भी लाभदायक बनाया जा सकता है।

फलों की उत्पादन तकनीक एवं नवीन उन्नत किस्मों के विकास में फल एवं औद्यानिकी प्रौद्योगिकी संभाग, भा.कृ.अ.प.– भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। इस लेख में संभाग द्वारा विकसित फलों की नवीन किस्मों का वर्णन किया गया है जिन्हें फल उत्पादक बड़े पैमाने पर लगाकर बाजार में ताजे फल के लिए,निर्यात, प्रसंस्करण ,इत्यादिके रूप मे उत्पादन कर सकता है।

आम

हमारे देश में आम की किस्मों की भरमार है परन्तु व्यवसायिक स्तर पर उगाई जाने वाली किस्मों की संख्या बहुत कम है। संभाग द्वारा सत्तर के दशक में आम्रपाली एवं मल्लिका तथा सन् दो हजार में पूसा अरूणिमा एवं पूसा सूर्या के विकास के अलावा विगत वर्षों (2011) में नई उन्नत संकर किस्मों जैसे पूसा प्रतिभा, पूसा श्रेष्ठ, पूसा लालिमा तथा पूसा पीताम्बर का विकास किया है। आम की विकसित नवीन किस्मों का विवरण इस प्रकार है।

पूसा प्रतिभाः यह किस्म आम्रपाली व सेन्सशन के संकरण से विकसित की गई है, जिसका विमोचन सन् 2012 में किया गया। यह किस्म नियमित फलन देने वाली, मध्यम ओजस्वी तथा मध्यम सघन बागवानी (6 मी x 6 मी.) हेतु उपयुक्त है। फलों का रंग पीले पृष्ठभूमि पर लालिमा लिये होता है। फल मध्यम आकार के (180–200 ग्रा.) जिसमें गूदे का प्रतिशत 71.1 होता है। फलों में मध्यम मिठास (19.6% कुल घुलनशील ठोस पदार्थ) एवं अच्छी सुगंध होती है। फलों की कमरे के तापमान पर निधानी आयु 7–8 दिनों की होती है। उत्तर भारत में फल जुलाई के प्रथम सप्ताह में तुड़ाई हेतु तैयार हो जाते हैं।

पूसा श्रेष्ठः इस किस्म का विकास आम्रपाली व सेन्सेशन के संकरण से हुआ है, जिसको सन् 2012 में व्यावसायिक उत्पादन हेतु विमोचित किया गया। इसके पौधे मध्यम आकार के होते है तथा नियमित फलन देने वाले होते हैं। जिनको 6 मी. x 6 मी. की दूरी पर लगाया जा सकता हैं। फल आकार में लम्बोतर आकर्षक लाल रंग के होते है। फल मध्यम आकार के (220–230 ग्रा.) तथा प्रचुर मात्रा में गूदा युक्त (71.9%) होते है। फलों में मध्यम मिठास (20.3% कुल घुलनशील ठोस पदार्थ), अच्छी सुगंध तथा निधानी आयु 7–8 दिनों की होती हैं। उत्तर भारत में फल जुलाई के प्रथम सप्ताह में तैयार हो जाते हैं।

पूसा लालिमाः यह किस्म दशहरी एवं सेन्सशन के संकरण से तैयार की गई है। जिसका विमोचन सन् 2012 में किया गया है। यह नियमित फलत देने वाली किस्म है, जिसके पौधे मध्यम ओजस्वी होते हैं, तथा उन्हें 6 मी. x 6 मी. की दूरी पर लगाया जा सकता है। फल मध्यम आकार (210 ग्रा.) के आकर्षक लाल रंग के होते हैं, जिनमें प्रचुर गूदा (70.1%), मध्यम मिठास (19.7%) के साथ–साथ अच्छी

सुगंध भी होती है। पकने के बाद फल लगभग 5–7 दिनों तक खराब नहीं होते हैं। यह एक जल्द पकने वाली किस्म है जिसके फल उत्तर भारत में जून के प्रथम पखवाड़े में तैयार हो जाते हैं। यह किस्म घरेलू एवं अन्तर्राष्ट्रीय बाजारों हेतु उपयुक्त हैं।

पूसा पीताम्बरः पूसा पीताम्बर किस्म आम्रपाली व लाल सुन्दरी के संकरण से तैयार की गई है। इसके पौधे मध्यम आकार के तथा नियमित फलत देते हैं। फल मध्यम आकार (210–220 ग्रा.) के आकर्षक पीले रंग के, रसयुक्त गूदा (73.6%), मध्यम मिठास (18.8 प्रतिशत) के साथ–साथ अच्छी खुशबू वाले होते हैं। यह किस्म घरेलू एवं अन्तर्राष्ट्रीय बाजारों हेतु उपयुक्त हैं। फल जुलाई के प्रथम सप्ताह में तैयार हो जाते हैं। इस किस्म के पौधों पर गुच्छा रोग कम आता है।

अंगूर

संभाग द्वारा सत्तर के दशक में पूसा सीडलेस तथा नब्बे के दशक (1996) में पूसा नवरंग तथा पूसा उर्वशी के विकास के अलावा विगत वर्षों में कई नई उन्नत संकर किस्मों जैसे पूसा आदिति, पूसा त्रिशार तथा पूसा स्वर्णिका का विकास किया है। उपोष्ण क्षेत्रों में उगाए जाने वाले विकसित नवीन किस्मों का विवरण इस प्रकार है।

पूसा आदितिः यह किस्म बंकुइयावाद एवं परलेट के संकरण से विकसित की गयी है। यह दिल्ली राज्य के लिए 2017 में जारी की गयी। यह अगेती, बीज रहित एवं ताजा खाने हेतु उपयुक्त है। फूल लगने के 80–85 दिन में तुड़ाई करने हेतु तैयार हो जाती है। गुच्छा बड़ा (397 ग्राम) एवं फल का आकार बड़ा (3.05 ग्राम), गूदादार, कुल मिठास 19.3^0 ब्रिक्स, तथा पंडाल पद्वति पर उपज 13–15 टन प्रति हेक्टेयर होती है । गुच्छा में साँट बेरिज नामक विकार नहीं होती है तथा दाने एक समान होते है। जिब्रेलिक अम्ल के उपयोग के प्रति अनुक्रियाशील है। पौध (लता) मध्यम ओजस्वी तथा 4 एवं 5 वें गाँठ पर गुच्छे निकलते हैं।

पूसा त्रिशारः यह तीन तरह का संकर (हूर x भारत अर्ली) x ब्यूटी सीडलेस है। यह जल्दी परिपक्व होता है तथा उपोष्ण क्षेत्रों के लिए उपयुक्त है। अर्ध–ओजस्वी और स्पर–प्रून्ड है। एंथ्रेक्नोज, पाउडर फफूंदी और दीमक के लिए मध्यम सहिष्णुता है। यह 10 जून तक परिपक्व हो जाता है। फल गोल (2.15 ग्राम), पीले–हरे रंग में, अच्छे टीएसएस (18.40 ब्रिक्स) और कड़े गूदा के साथ होते है। अंगूर के गुच्छे और फल जिब्रेलिक अम्ल के उपयोग के प्रति अनुक्रियाशील है। फल ताजा खाने और रस बनाने के लिए उपयुक्त हैं। औसत उपज लगभग 14–16 टन/हेक्टेयर है।

पूसा स्वर्णिकाः यह किस्म हूर एवं कार्डिनल के संकरण द्वारा 2018 में जारी की गयी है। यह एक अगेती किस्म है जिसमें बीज होता है। फल का रंग सुनहरा पीला तथा ताजा खाने एवं मुनक्का बनाने हेतु उपयुक्त है। यह 80–85 दिन में तैयार होने वाली किस्म है जिसके फल बड़े गोलाकार, सुनहरा पीला तथा कठोर गूदादार वाले होते है। फल में मिठास 20–220 ब्रिक्स पाया जाता है। फल बड़े आकार (3.5–5.0 ग्राम, 15–20 मिली मीटर ब्यास) के होते है। तथा गुच्छे प्राकृतिक रूप से ढीले होते हैं। गुच्छे का आकार (386 ग्राम, 15–20 मिमी. लम्बा½ cM+k g®ता है। यह मध्यम ओजस्वी तथा 5–6 वें कलिका पर गुच्छा निकलता है। पंडाल कृन्तन पद्वति पर उपज 13–15 टन प्रति हेक्टेयर है। यह संकर किस्म एन्थ्रेक्नोज तथा चूर्णील फँफूद रोग के प्रति सहनशील है।

नींबू वर्गीय फल

नींबू वर्गीय फलों में आने वाले विभिन्न समूहों की किस्में अलग–अलग होती हैं। इसलिए किस्मों का चुनाव बहुत सावधानी पूर्वक करना चाहिए। संभाग द्वारा विकसित नवीन किस्मों का विवरण इस प्रकार है।

मीठी नांरगी

पूसा राउंडः यह घने पर्ण समूह और आकर्षक गोल फल वाला एक चयन है। इसमें मध्यम आकार के फल (268. 68 ग्राम), उच्च रस (119.00 मिली/फल, 48.26%) और मध्यम अम्लता (0.92%) के साथ कुल घुलनशील ठोस पदार्थ (10.140 ब्रिक्स) होती है। इसके अलावा, पौधे मध्यम रूप से जोरदार होते हैं और इस चयन के लगभग 400 पौधों को एक हेक्टेयर (5 मीटर x 5 मीटर) में समायोजित किया जा सकता है। प्रति पौधे के आधार पर, यह जाफा से

3.5 गुना अधिक ओर वेलेंसिया से 2.4 गुना अधिक उपज देता है, इसलिए, यह प्रति यूनिट क्षेत्र में उच्च उत्पादकता देता हैं। इसके फल ग्रेनुलेसन रहित होते है।

पूसा शरदः यह एक चयन द्वारा विकसित किस्म है जिसमें मध्यम ओजस पेड़ होते हैं। यह किस्म 5 मीटर की दूरी पर रोपण के लिए उपयुक्त है तथा कम या ज्यादा डंठल, कंटीले, घने पत्तों वाले होते है। औसत फल का वजन 227.56 ग्राम, आकार मे गोल, रस की रिकवरी 50.12%, मध्यम मोटा छिलका, कुल घुलनशील ठोस पदार्थ (9.200 ब्रिक्स) और मध्यम अम्लता (0.77%) होती है। जाफा की तुलना में 2.6 गुना अधिक ओर वेलेंसिया की तुलना में 1.8 गुना अधिक उपज देता है इसलिए, यह प्रति यूनिट क्षेत्र में उच्च उत्पाकता देता है इसके फल ग्रेनुलेसन रहित होते हैं ।

नींबू

पूसा अभिनवः यह एक आशाजनक क्लोनल चयन है जिसमें मध्यम जोरदार पेड़, घने पत्ते और आकर्षक चमकदार पीले रंग के गोल फल होते हैं। यह गर्मियों के महीनों (मार्च–अप्रैल और अगस्त–सितंबर) के साथ वर्ष भर फल देता है और सिट्रस कैंकर के लिए असंवेदनशील होता है। इसमें उच्च रस सामग्री (56.92%) ओर अम्लता (7.72%) के साथ मध्यम आकार के फल (38.15 ग्राम) होते हैं। दो सीज़न की कटाई के साथ वर्ष भर चलने वाला यह चयन व्यावसायिक खेती के साथ–साथ गृह वाटिका के लिए भी उपयुक्त है।

पूसा उदितः यह एक क्लोनल चयन है जिसमें घनी छतरी, भारी उपज, फल गोल मध्यम आकार के (37.9 ग्राम), फल की लंबाई (43.9 मिमी), व्यास (39.3 मिमी), छिलका की मोटाई (1.1 मिमी), बीज (8.3/फल), फल पकने पर चमकीले पीले, रस (43.3:), कुल घुलनशील ठोस पदार्थ (8.5%) एवं अम्लता (6.9%), होती है। यह अगस्त–सितम्बर और फरवरी–मार्च से वर्ष भर फल देता हैं। यह मध्यम रूप से सिट्रस कैंकर के लिए अति संवेदनशील है। दो सीज़न की कटाई के साथ वर्ष भर चलने वाला यह चयन व्यावसायिक खेती के साथ–साथ गृह वाटिका के लिए भी उपयुक्त है।

मृदा स्वास्थ्य में सुधार की सर्वोत्तम प्रबंधन तकनीकीया

महेश चंद मीना, गोरधन गेना एवं अबीर डे
मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विज्ञान संभाग,
भ.कृ.अनु.प–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा नई दिल्ली

भारत में हरित क्रांति के बाद फसल उत्पादन में वृद्धि हुई है लेकिन सघन कृषि व उच्य उत्पादकता वाली किस्मों का प्रयोग किया जा रहा है इसके फलस्वरूप मृदा से लगातार पोषक तत्वों का दोहन हो रहा है। फसलों के पोषक तत्वों की मांग को पूरा किए बिना अधिक से अधिक उत्पादन प्राप्त करने की होड़ लगी है जिससे मृदा की उर्वराशक्ति पर कुप्रभाव पड़ा है। किसानों के द्वारा कार्बनिक खादों का प्रयोग नहीं करने की वजह से मृदा के भौतिक एवं जैविक–गुणों में नकारात्मक प्रभाव पड़ा है। पोटैशियम एवं गौण व सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी के कारण फसलों की कीट–रोग प्रतिरोधी क्षमता में भी कमी आयी है। फसल–चक्र न अपनाने के कारण न केवल मृदा–स्वास्थ्य में गिरावट आई है बल्की खरपतवार तथा कीड़े और बिमारियों का प्रकोप बढ़ता जा रहा है। कुल मिलाकर यही कहा जा सकता है कि मृदा–स्वास्थ्य में उत्पन हुये विकारों के कारण कृषि की समस्याएँ दिन प्रति दिन बढ़ रही हैं और मृदा–उत्पादकता में कमी आ रही है। धान और गेहूँ के अवशेषों को खेत में जला देने से न केवल वायु प्रदूषण की समस्या उत्पन्न होती है जो मानव–पशु–मृदा स्वास्थ्य के लिए भी घातक सिद्ध हो रहा है। एकल फसल प्रणाली, गहन जुताई एव साफ–सुथरी खेती की पद्दति से मृदा की निचली सतह भी कठोर हो रही है कृषि भूमि का जोत आकार बहुत तेजी से घटता जा रहा है। मृदा के भौतिक, रासायनिक और जैविक घटक व पोषक तत्वों की उपयोग दक्षता और फसल उत्पादकता में सुधार के लिए अवशेषों के प्रबंधन, उपयुक्त फसलचक्र का चयन, बेहतर जुताई पद्धति एवं पोषक तत्वों को सन्तुलित मात्रा में इस्तेमाल करने के साथ ही यह भी देखना होगा कि कहीं गौण एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी के कारण उर्वरकों की दक्षता में कमी तो नहीं हो रही है। उर्वरकों का सही मात्रा में सही समय एवं सही विधि से प्रयोग किया जाना चाहिए ताकि जल–निक्षालन द्वारा उर्वरकों में विशेष कर नत्रजन से जल दूषित न हो और उर्वरक की प्रति इकाई मात्रा से उत्पादन में अधिकतम वृद्धि सुनिश्चित हो सके। फसल तथा उसमें प्रयुक्त जैविक खादों तथा पोटाश, फास्फोरस एवं गोण व सूक्ष्म पोषक तत्वों के अवशिष्ट प्रभाव को ध्यान में रखते हुए आगामी फसल के लिए उर्वरकों की मात्रा का निर्धारिण किया जाना चाहिए इसलिये मृदा परीक्षण के आधार पर उर्वरकों का प्रयोग आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण होता है। रासायनिक उर्वरकों के संतुलित प्रयोग के साथ ही जैविक खादों एवं जैव उर्वरकों का यथासम्भव इस्तेमाल से कृषि की लागत को कम करके अधिक उत्पादन लेने व मृदा स्वास्थ्य को बनाये रखने की सर्वोतम मृदा प्रबंधन प्रोद्यौगिकी निम्न प्रकार से है।

एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन

मृदा उर्वरता में वृद्धि अथवा बनाए रखने के लिये पोषक तत्वों के सभी उपलब्ध स्त्रोंतों से मृदा में पोषक तत्वों का इस प्रकार सामंजस्य रखा जाता है, जिससे मृदा की भौतिक,रासायनिक और जैविक गुणवत्ता में सुधार के साथ साथ लगातार उच्च आर्थिक उत्पादन लिया जा सकता हैं। कार्बनिक खादें वर्तमान फसल को तो लाभ पहुँचाती ही हैं साथ ही आगामी फसल को भी अवशोषित प्रभाव ारा लाभ पहुँचाती हैं जैसा की एक टन गोबर की खाद में लगभग 12 kg पोषक तत्व नत्रजन, फास्फोरस, तथा पोटाश होते हैं।

जैविक खादः जैविक खाद का उपयोग किसान प्राचीनकाल से करते आ रहे हैं परन्तु अधिक पैदावार देने वाली फसल की किस्म के लिए अधिक पोषक तत्वों की आवश्यकता होने के कारण जैविक खाद पर निर्भर न रहकर रसायनिक उर्वरकों को मुख्य रूप से प्रयोग करते हैं। रसायनिक उर्वरकों के लगातार अधिक मात्रा में प्रयोग करने से मृदा व पर्यावरण के लिए हानिकारक होता है। जैविक खाद न केवल पौषक तत्वों की पूर्ति करती है अपितु मृदा की भौतिक, जैविक तथा रासायनिक गुणवता को भी बढ़ाती है।

भारत में गोबर की खाद,विभिन्न प्रकार की कम्पोसट, वर्मी कम्पोसट, बायोगैस स्लरी, खालियां, मुर्गी, भेड़ अथवा बकरी से प्राप्त खाद एवं हरी खाद मुख्य रुप से प्रयोग में आने वाले जैविक खाद के स्त्रोत हैं। खेत में हरी खाद के लिए मुख्य रूप से दलहनी फसलें उगाकर मृदा की उर्वरता में सुधार किया जा सकता है। हरी खाद की फसलों में ढ़ैंचा, सन, लोबिया तथा दूसरी दलहनी फसले मुख्य हैं कुछ महत्वपूर्ण हरी खाद फसलों से प्राप्त हरे पदार्थ की मात्रा एवं नत्रजन की उपलब्धता को निम्न सारणी में प्रस्तुत किया गया है।

दलहनी हरी खाद फसलों को नाइट्रोजन स्थिरीकरण (यौगिकीकरण) में योगदान

फसल का नाम	उगाने की ऋतु	हरे पदार्थ की औसत उपज (टन/हेक्टेयर)	हरे पदार्थ में नाइट्रोजन (प्रतिशत)	मृदा में नाइट्रोजन का योगदान (किगा./हेक्टेयर)
ढैंचा	खरीफ, जायद	15	0.45	77
मूंग	खरीफ, जायद	5	0.53	40
लोबिया	खरीफ, जायद	12	0.50	56
ग्वार	खरीफ, जायद	14	0.35	62
बरसीम	रबी	10	0.43	60

फसल अवशेष गेहूं के अवशेष, कपास के डण्ठल, गन्ने की सूखी पत्तियों तथा धान का भूसा इत्यादि की बड़ी मात्रा उपलब्ध है। अनुसंधानों से यह सिद्ध हुआ कि गेहूँ व धान का भूसा के साथ 25 किग्रा. नाइट्रोजन/हेक्टेयर या फली वाली फसल का अवशेष मृदा में डालने से मृदा की उर्वरता पर अवश्य ही धनात्मक प्रभाव होता है।

प्रेसमड भारत में वर्ष भर में भारी मात्रा में प्रेसमड, शीरा एवं बैगस (खोई) का चीनी मिलों से उत्पादित होता है जिसमें कि लोहा, जिंक, कैल्शियम तथा मैंग्नीज उपस्थित होता है। प्रेसमड का सूक्ष्म जीव से विघटन करने के पश्चात् खेत में प्रयोग करने से मृदा के रासायनिक, भौतिक व जैविक गुर्गों में सुधार होता है प्रेसमड व फ्लाई एश को भूमि सुधारक के रुप में प्रयोग करके समस्याग्रस्त एवं सामान्य मृदाओं की उर्वरता में भी सुधार लाया जा सकता है।

जैव–उर्वरक इनका प्रयोग करने से वायुमण्डलीय नाइट्रोजन का स्थिरीकरण, मृदा में उपस्थित फास्फोरस व अन्य पोषक तत्वों को पौधों के लिए उपलब्धता बढ़ाकर मृदा की उर्वरता एवं स्वास्थ्य को ठीक रखते हैं उदाहरण के लिए दलहनी फसलों में राइजोबियम का सबसे अधिक प्रयोग किया जाता है इसी प्रकार फास्फोरस,पोटाश एवं सूक्ष्म तत्वों की उपलब्धता बढ़ने के लिए जैविक उर्वरकों का प्रयोग किया जाता है। जैव उर्वरकों के प्रयोग से रासायनिक उर्वरकों की मात्रा में कटौती करते हुये उचित उपज व लाभ ले सकते है इसके साथ साथ मृदा स्वास्थ्य को भी उत्तम रखा जा सकता है ।

रासायनिक उर्वरक आधुनिक कृषि में खाद्यन्न उत्पादन के लिए रासायनिक उर्वरक एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। रसायनिक उर्वरकों का मृदा उर्वरता पर अनुकूल प्रभाव इस संदर्भ में लिया जा सकता है कि इनके प्रयोग से मरुस्थलीकरण कम हुआ जैव विविधता बढ़ी, पोषक तत्वों के दोहन में कमी हुयी है। फसलों में रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग वैज्ञानिक तरीके से करना चाहिए। नत्रजन, फास्फोरस और पोटेशियम के लिए क्रमशः युरिया, डीएपी और म्युरेट आफ पोटाश उर्वरक का प्रयोग किया जाता है। गंधक के प्रमुख स्रोत गंधक तत्व, जिप्सम एवं आयरन पाइराइटस है जिंक व आयरन की कमी को दूर करने के लिए क्रमशः जिंक सल्फेट व आयरन सल्फेट का प्रयोग किया जाता है। फास्फोरस एवं पोटाशयुक्त उर्वरकों का प्रयोग प्रायः बुआई के समय तथा नत्रजन युक्त उर्वरकों (यूरिया/अमोनियम सल्फेट) खाद्यान्न फसलों में, एक बार की बजाय दो या तीन बार करना अधिक उपयोगी रहता है। अगर मृदा में नत्रजन की मात्रा मध्यम या अधिक हो तो बुवाई के समय यूरिया का प्रयोग न करके यूरिया उर्वरक की मात्रा कम की जा सकती है बल्की खड़ी फसल में प्रयोग करें जिससे अधिक उपज व पर्यावरण सुरक्षित रहेगा।

क्षेत्र–विशिष्ट पोषक तत्व प्रबंधन

क्षेत्र–विशिष्ट पोषक तत्व प्रंबधन का उद्देश्य आवश्यकता के अनुसार उचित पोषक तत्व एवं फसल प्रबंधन से अधिक उपज का लाभ प्राप्त करना है जिसमें एक फसल या किस्म विशेष के लिए क्षेत्र और मौसम–विशिष्ट आवश्यकता के अनुरूप स्थानीय रूप से अनुकूलित पोषक तत्व प्रबंधन किया जाता है मृदा प्रबंधन में स्थानीय संसाधन का समुचित उपयोग करने के लिए निम्नलिखित आवश्यक बातों को अपनाया जाता हैः

1. सभी सुलभ पोषक तत्वों के स्रोतों का कुशल उपयोग करना जिसमें जैव खादें, फसल अवशेष, तथा अकार्बनिक उर्वरक सुलभता एवं कीमत के अनुसार सम्मिलित हो।
2. पत्ती रंग पट्टिका का उपयोग करते हुए पादप आवश्यकता आधारित नाइट्रोजन प्रबंधन रणनीति का अनुपालन।
3. पोषक तत्व वंचित क्यारी के उपयोग द्वारा मृदा की नैसर्गिक पोषक तत्व आपूर्ति (विशेषतः फॉस्फोरस तथा पोटैशियम) का निर्धारण।
4. फसल को पोषक तत्वों (मुख्य तथा सूक्ष्म पोषक तत्वों) की संतुलित आपूर्ति सुनिश्चित करना।
5. मृदा पोषक तत्वों के भंडार का ह्रास रोकने हेतु दाना तथा भूसा के द्वारा निष्कासित पोषक तत्वों (विशेषतः फास्फोरस तथा पोटैशियम) को प्रतिस्थापित करना।
6. उर्वरक स्रोतों के न्यूनतम कीमत वाला संयोजन का चयन करना।

उच्च गुणवत्ता वाला बीज तथा उपयुक्त पौध–सघनता का उपयोग, समेकित नाशीजीव प्रबंधन तथा उत्तम फसल प्रबंधन ताकि क्षेत्र–विशिष्ट पोषक तत्व प्रबंधन का पूरा लाभ प्राप्त हो सके, था स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप क्षेत्र–विशिष्ट पोषक तत्व प्रबंधन करके फसल की उत्पादकता व आर्थिक लाभ को बढ़ाया जा सकता है अभी तक के अनुसंधान से यह सुनिश्चत हो गया है की हम क्षेत्र–विशिष्ट पोषक तत्व प्रबंधन से मृदा स्वास्थ्य को सुधार के साथ साथ पर्यावरण व भूमिगत जल प्रदुषण को भी रोका जा सकता है।

मृदा परीक्षण के आधार पर पोषक तत्वों का प्रयोग

मृदा परीक्षण, मृदा की उर्वरता और उत्पादकता के बारे में एक सम्पूर्ण जानकारी प्रदान करती है। यह किसानों की खेती में अनावश्यक उर्वरक के खर्चे को कम करने में सहायक होती है। मृदा की उत्पादन क्षमता उसकी उर्वरा शक्ति पर निर्भर करती है। पौधे अपने विकास एवं बढवार के लिए आवश्यक पोषक तत्व मृदा से प्राप्त करते है। पौधों को इन तत्वों की आवश्यकता फसल की किस्म तथा उससे प्राप्त की जाने वाली उपज के स्तर पर निर्भर करती है। उपज प्राप्ति का लक्ष्य जितना बड़ा होगा इन तत्वों की उतनी ही अधिक मात्रा की आवश्यकता होती है। मृदा में इन तत्वों की मात्रा सही अनुपात में होने पर ही अच्छी उपज प्राप्त की जा सकती है। मृदा की उर्वरा शक्ति के प्रबंधन के लिए उपलब्ध पोषक तत्वों के प्रकार एवं मात्रा की जानकारी होना आवश्यक है। फसल विशेष के लिए उपलब्ध तत्वों की आवश्यक मात्रा का प्रबंधन इस तरह से होना चाहिए कि मृदा की उर्वरा शक्ति का ह्रास न हों, साथ ही पौधों को सन्तुलित पोषण प्राप्त हो और उर्वरकों के असन्तुलित प्रयोग से मृदा, पौधों एवं पर्यावरण पर होने वाले दुष्प्रभावों को कम किया जा सके। इसी प्रकार सघन खेती में अधिक उपज वाली संकर किस्मों के लिए अधिक सिंचाई एवं उर्वरकों की आवश्यकता होती है अगर फसलों के पोषक तत्वों की पूर्ति आवश्यकता अनुसार नहीं की तो पौधे अपनी पूर्ति मृदा से करते है जिससे भूमि में उपलब्ध तत्वों की कमी हो जाती है। जब तक हमें मृदा की समस्याओं एवं उसमें जैविक कार्बन एवं पोषक तत्वों के बारे में उचित जानकारी नहीं हो तब तक उसका उचित प्रबंधन नहीं किया जा सकता है। मृदा परीक्षण में निम्न पोषक तत्वों की जाँच की जाती है।

मृदा परीक्षण के मापदंड

मापदण्ड	मान	विवरण
पीएच.	6.5–7.5 8.5 से अधिक 6.5 से कम	सामान्य मृदा क्षारीय मृदा अम्लीय मृदा
विद्युत चाल. कता	0–2 डेसी साइमन प्रति मीटर 2 और उससे अधिक	सामान्य लवणीय मृदा

मृदा पीएच व विधुत चालकता के अधार पर मृदा अम्लीय, क्षारीय व लवणीय समस्या की जानकारी होती है अम्लीय मृदा की समस्या मुख्यतः अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में होती है तथा इसके सुधार हेतु प्रयोगशाला में चूने की आवश्यकता परीक्षण के आधार पर चूने का उपयोग किया जाता है।

क्षारीय एवं लवणीय मृदा की समस्या प्रायः शुष्क जलवायु व खराब जल गुणवता वाले क्षेत्रों में पायी जाती हैं। क्षारीय मृदा के सुधार हेतु प्रयोगशाला में जिप्सम की आवश्यकता परीक्षण के आधार पर जिप्सम की मात्रा का उपयोग वर्षा या सिंचाई से पूर्व अच्छी प्रकार से मृदा में मिलाकर किया जाता है। लवणीय मृदा में घुलनशील लवणों की अधिक मात्रा के कारण बीज का अंकुरण और विकास पर बुरा प्रभाव होता हैद्य लवणीय मृदा के सुधार हेतु लवण को खुर्च कर या अच्छे गुणवता वाले जल में घोलकर निछालन (लिचिग) द्वारा कम किया जाता है इसके साथ–साथ अच्छी गुणवता वाले जैविक खादों का प्रयोग करना चाहिए।

मृदा में उपलब्ध मुख्य पोषक तत्वों की व्याख्या

पोषक तत्व	बहुत निम्न	निम्न	मध्यम	उच्च	अत्यधिक
जैविक कार्बन (%)	0.25 से कम	0.25–0.50	0.50– 0.75	0.75–1.0	1.0 से अधिक
उपलब्ध नत्रजन (kg N/ha)	140 से कम	140–280	280 से 560	560–700	700 से अधिक
उपलब्ध फास्फोरस (kg P/ha)	5 से कम	5–10	10 से 25	25–30	30 से अधिक
उपलब्ध पोटाश (kg K/ha)	60 से कम	60–120	120 से 280	280–340	340 से अधिक
क्षेत्र अनुसार उर्वरकों की सिफारिश मात्रा	50% बढ़ाकर डालें	25% बढ़ाकर डाले	सामान्य सिफारिश डालें	25% कम डालें	50% कम डालें

मृदा परीक्षण करवाने पर प्राप्त रिपोर्ट के आधार पर उर्वरक डालने की व्याख्या उपरोक्त सारणी में की गई हैं। उर्वरक की मात्रा राज्य व फसलों के अनुसार अलग अलग सिफारिश की गई है उदाहरण के लिए किसान की मृदा रिपोर्ट में नत्रजन की मात्रा और उसको गेहूं के लिए यदि 120 किलो नत्रजन डालने की सिफारिश की गई है तो उसे नत्रजन की मात्रा 25% कम करके अर्थात 90 किलो प्रति हैक्टर कुल नत्रजन की मात्रा गेहूं के लिए डालें।

संरक्षण कृषि

संरक्षण कृषि में भूमि की सतह पर फसल अवशेषों को रखते हुए भूमि को बिना या कम से कम जुताई करके फसलों को उगाना तथा फसल चक्र में दलहनी फसलों का समावेश करके खेती की जाती है।

संरक्षण खेती के सिद्धांत

1. फसलें उगाने की ऐसी प्रणालियां विकसित करना और उन्हें बढ़ावा देना, जिनके कारण मृदा में सबसे कम व्यवधान होता है जैसे न्यूनतम एवं शून्य जुताई।
2. मृदा की सतह पर फसल अवशेषों को छोड़ने तथा आवरण फसलें उगाने आदि विधियों को अपनाकर मृदा की ऊपरी सतह को ढक कर रखना, अर्थात फसल पलवार का प्रयोग।
3. फसल चक्र, अंतःखेती, कृषि वानिकी आदि के माध्यम से विविधीकृत फसल को बढ़ावा देना अर्थात फसल विविधीकरण।

संरक्षण खेती में मृदा में कम से कम यांत्रिक छेड़छाड़ करने, मृदा सतह के जैविक पलवार से ढके रहने तथा फसल चक्र अपनाने से मृदा की भौतिक, रासायनिक तथा जैविक गुणवत्ता में लगातार वृद्धि होती है। इसके कारण मृदा का जल तथा वायु संचार बढ़ जाता है, जबकि संरक्षण खेती में मृदा सतह पर फसल अवशेषों की परत होने के कारण मृदा कणों को बांधे रखने की क्षमता बढ़ जाती है, जिससे जल तथा वायुकटाव की तीव्रता कम हो जाती है। इसके अतिरिक्त संरक्षण खेती में उगाई जाने वाली दलहन फसलें भी मृदा को जल तथा वायुकटाव से संरक्षण प्रदान करती है। इसलिए संरक्षण खेती मृदा स्वास्थ्य सुधार में बहुत उपयोगी सिद्ध हुई है।

किसान रासायनिक उर्वरकों के संतुलित प्रयोग के साथ ही जैविक खादों एवं जैव उर्वरकों का यथासम्भव इस्तेमाल से कृषि की लागत को कम करके अधिक उत्पादन लेने व मृदा स्वास्थ्य को बनाये रखने व सुधार के लिए उपरोक्त सभी तकनिकीयों का प्रयोग कर सकते है।

भंडारित खाद्यान्नों में समेकित कीट व अन्य पीड़क प्रबंधन

हरीश कुमार, एन. वी. कुम्भारे एवं के. एस. यादव
कृ.प्रौ.सू.के. (एटिक), भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान
नई दिल्ली–110012

देश के कुल उत्पादन का लगभग 7 प्रतिशत अनाज भण्डारण के दौरान नष्ट हो जाता है। कुल उत्पादन का लगभग 70 प्रतिशत भाग स्थानीय स्तर पर कृषकों द्वारा परम्परागत तरीकों से भण्डारित किया जाता है। इन तरीकों में कच्ची कोठियों में अनाज भण्डारण, बीज व खाद्यान्नों को मटकों में राख मिलाकर भण्डारण, प्लास्टिक या जूट की बोरियों में अनाज रखना, नीम की पत्तियां, राख तथा बालू मिट्टी को अनाज में रखकर भण्डारित करना आदि शामिल हैं।

कीटों की लगभग 50 प्रजातियां बीजों व खाद्यान्नों को हानि पहुंचाते हैं लेकिन इनमें से करीब एक दर्जन प्रजातियां महत्वपूर्ण हैं।

1. **प्राथमिक या आंतरिक कीट** : ऐसे कीट जो स्वयं बीज को सर्वप्रथम क्षति पहुंचाने में सक्षम होते हैं।
   (क) सूंड वाली सुरसुरी (ख) अनाज का पतंगा (ग) दाल का ढ़ोरा
2. **गौण (बाह्यभक्षी) कीटः** वो कीट जो बाहर रहकर भ्रूण या अन्य भाग को हानि पहुंचाते हैं जैसे :
   (क) छोटा छेदक या घुन (ख) आटे का कीट
   (ग) गोदाम का पतंगा (घ) चावल का पतंगा
   (ड.) खपरा बीटल इत्यादि

अलग–अलग प्रकार के खाद्यान्नों एवं बीजों को नुकसान पहुंचाने वाले कीट भिन्न हो सकते हैं परन्तु सामान्यतः उनको नियंत्रित करने के उपाय एक जैसे ही होते हैं।

भण्डारित अनाज में उचित नमी व तापमान द्वारा कीट प्रबंधन : जलांश (नमी) की मात्रा अधिक या कम होने पर बीज व खाद्यान्न के जीवन तथा गुणवत्ता पर दुष्प्रभाव पड़ता है। अधिक नमी से कीट व फफूंद की संभावना बढ़ती है एवं खाद्यान्न प्रसंस्करण में बाधा होती है। वातावरण का तापमान व आर्द्रता खाद्यान्न की नमी को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारक हैं अनाज को धूप में व कृत्रिम उपकरणों से सुखाया जा सकता है। भण्डारित अन्न की नमी साधारणतः 10 प्रतिशत रखें, अपवाद में धान के लिये यह 13 प्रतिशत है, तिलहनों के लिये सम्भव हो सके तो नमी 8–9 प्रतिशत रखना चाहिये।

भण्डारण से पूर्व व बाद में भंडारण कक्ष एवं पात्र को कीट मुक्त करना

खाद्यान्नों को कीट के प्रकोप से बचाने हेतु समय–समय पर उपयुक्त उपायों को अपनाकर प्रकोप को निर्धारित सीमा के नीचे रखा जाता है। वास्तव में कीट प्रबंधन का कार्य फसल की कटाई से ही शुरू हो जाता है। इसके लिए कटाई, गहाई एवं ढुलाई में प्रयुक्त यंत्रों व साधनों को कीट मुक्त रखना चाहिए। खलिहान को भी बराबर एवं साफ करके ही कटी फसल वहां रखना चाहिए। इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए कि फसल कटने के बाद वर्षा या अन्य कारणों से बीज भीगना नहीं चाहिए क्योंकि बहुत से ऐसे बीजों में कीटों का प्रकोप अधिक होता है। भण्डारण कक्ष एवं भण्डारण पात्र को कीट मुक्त रखने हेतु समुचित उपाय करना आवश्यक होता है, जो निम्नवत है :

भण्डारण से पूर्व

- सबसे पहले खाद्यान्न व बीज भण्डारण के लिए प्रयोग होने वाले कमरे, गोदाम या पात्र जैसे कुठला इत्यादि के सुराखों एवं दरारों को यथोचित गीली मिट्टी या सीमेंट से भर दें।
- यदि भंडारण कमरे या गोदाम में करना है तो उसे अच्छी तरह साफ करने के पश्चात मैलाथियान, क्लोरपाइरीफॉस या डी.डी.वी.पी. की एक लीटर मात्रा 100 लीटर पानी में (10 मि.ली. कीटनाशी एक लीटर

पानी में) घोलकर अंदर हर जगह छिड़काव करना चाहिए।

- बीज रखने हेतु नई बोरियों का प्रयोग करें। यदि बोरियां पुरानी हैं तो उन्हें गर्म पानी में 50^0 से. पर 15 मिनट तक भिगोकर रखें और सुखा लें या फिर उन्हें मैलाथियान के घोल जिसमें 3 मि.ली. कीटनाशी प्रति ली. पानी के हिसाब से मिश्रित हो या डेल्टामेथ्रिन की 0.5 मि.ली./ली. पानी में मिली हो, के घोल में 10 से 15 मिनट तक भिगोकर बोरियों को छाया में सुखा लें। इसके बाद उनमें बीज या अनाज भरें।
- भण्डारण यदि कुठाला या मटका में करना है तो पात्र में आवश्यकतानुसार उपले या गोसे उसके ऊपर 500 ग्रा. सूखी नीम की पत्तियां डालकर धुंआ करें एवं ऊपर से बंद करके वायु अवरोधी कर दें। पुनः उस पात्र को 4 से 5 घंटे खोलकर ठंडा कर लें एवं साफ करके बीज या अनाज का भंडारण करें। खुले निकासी मार्ग इत्यादि को बंद करके पात्र को वायु अवरोधी बना दें।
- मटके यदि अन्दर या बाहर एक्रीलिक पेंट (एनामेलपेंट) से पुते हों तो 10 मि.ली. मेलाथियान 50 ई.सी., एक लीटर पानी में मिलाकर अंदर बाहर छिड़काव करें एवं छाया में सुखाकर भंडारण हेतु प्रयोग करें बीज भरने के बाद पात्र का मुंह बंद कर वायु अवरोधी कर दें।
- किसी भी स्थान या पात्र रखने से पूर्व बीज को अच्छी तरह सुखा लेना चाहिए जिससे उसमें नमी की मात्रा 10 प्रतिशत या उससे कम रह जाये। कम नमी वाले या अनाज बीजों में अधिकांश कीट नुकसान नहीं कर पाते हैं।
- यदि भंडारण गोदाम में कर रहे हैं तो कभी भी पुराने बीज के साथ नये बीज को नहीं रखना चाहिए। भंडारण करने से पहले यह जांच कर लेना चाहिए कि नये अनाज में कीड़ा लगा है या नहीं। यदि लगा है तो भंडारण ग्रह में रखने से पूर्व उसे प्रधूमित कर लेना चाहिए।
- ऐसे बीज जिनकी बुआई या बिक्री अगले फसल के बीजने तक निश्चित हो, ऐसे बीजों को कीटनाशी जैसे मैलाथियान की 6 से 8 मि.ली. या डेल्टामेथ्रिन की 4 से 5 मि.ली. मात्रा, 500 मि.ली. पानी में घोलकर एक क्विंटल बीज को उपचारित करते हैं एवं छाया में सुखाकर भंडारण पात्र में रख लेते हैं। कीटनाशी द्वारा उपचारित इस प्रकार के बीजों को किसी रंग द्वारा रंग देते हैं एवं भंडारण पात्र के ऊपर उपचारित लिख देते हैं। इस प्रकार का उपचार कम से कम छः माह तक काफी प्रभावी होता है। परन्तु ऐसा उपचार अनाज में नहीं करना चाहिए एवं उपचारित बीज को कभी भी आदमी या जानवर द्वारा नहीं खाना चाहिए।
- बीज भरी बोरियों या थैलों को लकड़ी की चौकियों, पट्टों अथवा 1000 गेज की पालीथीन चादर या बांस की चटाई पर रखना चाहिए ताकि उनमें नमी का प्रवेष न हो सके।

भंडारण के बाद

- भंडारण के कुछ कीट फसल की कटाई से पहले खेत में ही अपना प्रकोप प्रारंभ कर देते हैं। ये कीट फसल के दानों पर अपने अण्डे देते हैं जो आसानी से भंडार ग्रह में पहुंच जाते हैं एवं वही हानि पहुंचाते हैं। इस प्रकार के कीटों में दालों का ढोरा (***कैलोसेब्रुकस*** की प्रजातियां) एवं अनाज का पतंगा (***साइटोट्रोगा***) प्रमुख हैं। इन कीटों से बीजों को बचाने हेतु एलुमिनियम फॉस्फाइड की दो गोलियां (प्रत्येक 3 ग्रा.) प्रति टन (एक टन 10 क्विंटल) बीज के हिसाब से 5 से 10 दिन के लिए प्रधूमित कर देते हैं ऐसा प्रधूमन भंडार में रखने के तुरंत बाद करें। प्रधूमित कक्ष खोलने के बाद जब गैस बाहर निकल जाए तो उसी दिन या अगले दिन 10 मि.ली. मैलाथियान क्लोरपाइरीफॉस, पिरिमीफॉस मिथाइल या 5 मि.ली. डेल्टामेथ्रिन प्रति लीटर पानी के हिसाब से मिलाकर बोरियों के ऊपर छिड़काव कर देना चाहिए।
- बीज प्रधूमित करते समय एलुमिनियम फॉस्फाइड की मात्रा 6.0 से 9.0 ग्रा. (2 से 3 गोली) प्रति टन बीज के हिसाब से आवरण प्रधूमन (कवर फ्यूमीगेशन) एवं 4.5 से 6.0 ग्राम (1.5 से 2.0 गोली) प्रति घन मीटर स्थान (स्पेस या कमरा फ्यूमीगेशन) के हिसाब से निर्धारित करते हैं।
- भंडार गृह को 15 दिन में एक बार अवश्य देखना चाहिए। बीज में कीट की उपस्थिति या फर्श व दीवारों पर जीवित कीट दिखाई देने पर आवश्यकतानुसार

कीटनाशी का छिड़काव करना चाहिए। यदि कीट का प्रकोप शुरूआती है तो 10 मि.ली. डी.डी.वी.पी. साथ में 2 मि.ली. डेल्टामेथ्रिन बीज की बोरियों के ऊपर एवं अन्य स्थान पर हर जगह छिड़काव करें।

- भंडार ग्रह में प्रकाश पाश (लाइट ट्रेप) लगाने से चावल की पंखी का प्रजनन कम हो जाता है।
- खाद्यान्न भंडार कक्ष में कर्बन डाई आक्साइड की मात्रा बढाने के परिणाम स्वरूप आक्सीजन के कमी के कारण गोदाम में उपस्थित कीट मर जाते हैं। ड्राई–आइस (ठोस कार्बन डाई आक्साइड) बाजार में आसानी से मिल जाती है जिसका उपयोग करके गोदाम में कार्बन डाई आक्साइड की मात्रा बढा सकते हैं।

कीटग्रस्त खाद्यान्न बीज का प्रधूमन एवं सावधानियां

ऐसे खाद्यान्न जो कीट द्वारा प्रभावित हो गये हैं, उनमें यदि प्रकोप ज्यादा है तो ऐसे बीजों व खाद्यान्नों को दुबारा प्रसंस्करण करने के पश्चात् ही प्रधूमित करना चाहिए। यदि प्रकोप कम है तब प्रसंस्करण की आवश्यकता नहीं होती।

प्रधूमन के तरीके

1. गोदाम या कमरे का प्रधूमन (स्पेश फ्यूमीमेशन)

यदि प्रधूमन गोदाम या कमरे में करना है तो सबसे पहले गोदाम को वायुरोधी करना है। इसके लिए गोदाम के सभी सुराखों और दरारों को पहले सीमेंट या गीली मिट्टी से भर दें। खिड़कियों और रोशनदानों को 700 या 1000 गेज की पॉलीथीन चादर द्वारा ढक कर, किनारों पर कील लगा कर गीली मिट्टी द्वारा सील कर देते हैं। बिजली बोर्ड के चारों ओर अच्छी तरह टेप लगा दें। जब यह सुनिश्चित हो जाए कि कक्ष पूर्णतया वायु रोधी हो गया है तब उसमें एलुमिनियम फास्फाइड (सेल्फॉस, क्वीकफॉस) की 4.5 से 6.0 ग्राम मात्रा (1.5 से 2.0 गोली) प्रति घन मीटर की दर से डालकर दरवाजे को गीली मिट्टी या टेप से सील कर दें। कक्ष को 7 से 10 दिनों तक बन्द रखने के बाद सावध ाानीपूर्वक खोलें।

2. आवरण प्रधूमन (कवर फ्यूमीगेशन)

यदि पूरे कमरे को न करके बीज की कुछ मात्रा प्रधूमित करनी है तो 700 से 1000 गेज की पोलीथीन चादर को बीज भरे बोरों के ऊपर बिछाकर किनारों को चौड़े टेप या गीली मिट्टी द्वारा बन्द कर देते हैं। पूरा बन्द होने से पूर्व एलुमिनियम फास्फाइड की 6.0 से 9.0 ग्रा. (2 से 3 गोली) मात्रा प्रति 10 क्विंटल बीज की दर से डालकर 7 से 10 दिनों तक प्रधूमित करते हैं। अक्सर यह तरीका पूरे गोदाम को प्रधूमित करने से ज्यादा बेहतर पाया गया है।

सावधानियां :

1. प्रधूमन हमेशा वायु अवरोधी गोदाम, कक्ष या पात्र में ही करना चाहिए।
2. प्रधूमन के दौरान कीटनाशी को खुले हाथों से न छूएं।
3. एल्युमीनियम फास्फाइड का प्रधूमन हमेशा रिहायशी स्थान से दूर करना चाहिए एवं वह स्थान खुला होना चाहिए।
4. प्रधूमन हमेशा स्वयं न करवा सरकार द्वारा प्रशिक्षित एवं अधिकृत व्यक्तियों द्वारा करना चाहिए।
5. एलुमिनियम फास्फाइड की गोलियां गोदाम या कमरे में श्वास रोक कर, जल्दी–जल्दी डाल कर बाहर आकर ही श्वास लेना चाहिए। शीघ्र करने के लिये खिड़कियां इत्यादि पहले से ही सील रखने चाहिए। केवल निकलने के द्वार को ही खुला रखें एवं उसे निकालकर तुरंत सील कर दें।

उन्नत भंडारण पात्र

बीज व अनाज के सुरक्षित भंडारण हेतु यह जरूरी है कि भंडारण पात्रों में बाहरी नमी, कीड़े व चूहे आदि न पहुंच सकें। वर्तमान में कई तरह के भंडारण पात्र उपलब्ध हैं :

1. नमीरोधी सतहयुक्त बास्केट
2. पोलीथीन सतह युक्त बॉस्केट
3. पूसा कोठी
4. पक्की कोठी
5. आर.सी.सी. कुठला
6. लोह जी आई कोठी
7. पंत नगर कुठला

ग्रामीण स्तर पर दालों का सुरक्षित भंडारण

भारत की ज्यादातर जनसंख्या शाकाहारी है, अतः दालों का यहां के खान–पान में प्रमुख स्थान है। दालों के माध्यम से प्रोटीन की आपूर्ति होती है।

कीड़े दालों के प्रमुख शत्रु हैं और साबूत दाल को नुकसान पहुंचाते हैं। इसका प्रमुख कीड़ा 'ढोरा' है। दली हुई दाल में कई अन्य प्रकार के कीट नुकसान पहुंचाते हैं।

ढोरा : यह ब्रुकेडी परिवार का है। ये तीन प्रकार के होते हैं :

1. वे कीड़े जो केवल भंडार घर में ही बढ़ते एवं प्रकोप करते हैं।
2. वे कीड़े जो खेतों में लगी खड़ी फसल पर प्रकोप करते हैं और भंडार में रखे दालों पर पनपते व नुकसान पहुंचाते हैं। मुख्यतः सभी दालों की फसलों पर इस समूह के कीड़े ज्यादा प्रकोप करते हैं।
3. वे कीड़े जो केवल खेतों में प्रकोप करते हैं लेकिन भंडार में नहीं पनपते हैं।

ढोरा के वयस्क उड़कर खेतों में लगी फसलों के अलावा भंडार में रखे दालों पर प्रकोप करते हैं। फसलों पर लगी फलियों पर अंडे देते हैं जिससे सुंडी निकलकर पनपते हुए दालों को ग्रसित कर देती है। इस प्रकोप का पता तब लगता है जब दानों से कीड़े निकलते हुए दिखाई देते हैं। जैसे–जैसे भंडार समय बीतता जाता है दालों का नुकसान बढ़ता जाता है। दालों के गुणों और मात्रा दोनों पर ही प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

समन्वित कीट नियंत्रण

भंडार गृह में दालों के कीड़ों के नियंत्रण के लिए प्रमुख तरीके निम्नलिखित हैं :

- दूषित पात्र और भंडार गृह कीट प्रकोप के प्रमुख कारण होते हैं। इसलिए दोनों पात्र एवं भंडार स्थान की समय–समय पर मरम्मत और सफाई प्रकोप कम करने के लिए अनिवार्य है।
- दालों को दूसरी फसल से अलग रखना चाहिए जिससे अन्य फसलों पर लगने वाले भंडारण कीट उनको ग्रसित न कर पायें।
- नये अनाज को पुराने से अलग रखना चाहिए।
- कपड़े के थैलों का प्रयोग करना चाहिए।
- पोलीथीन के बैग का प्रयोग करने से कीड़ों का प्रकोप रोका जा सकता है लेकिन दानों में नमी 12 प्रतिशत से कम होनी चाहिए।
- भंडार गृह और पात्र दोनों साफ–सुथरे होने चाहिए।
- दानों में नमी 10 प्रतिशत से कम हो तो प्रकोप नहीं होता है।
- दाल खेतों से आने के बाद उपचारित कर देने से खेतों में लगे कीड़े मर जाते हैं और उनके प्रकोप से बचाव हो जाता है।
- जहां तक संभव हो कीट प्रतिरोधी किस्मों का प्रयोग किया जाए।

इन सावधानियों के साथ निम्नलिखित विधियों से कीट नियंत्रण आसानी से और बिना कीटनाशक दवा के किया जा सकता है :

(क) कटाई का समय

समय से पहले कटाई करने से कीट प्रकोप में कमी आती है, क्योंकि पकी फसल पर कीड़े अंडे देकर प्रकोपित कर देते हैं और कीड़े दालों के साथ आकर भंडारण के समय बढ़ जाते हैं तथा काफी नुकसान पहुंचाते हैं।

(ख) ट्रैप

आजकल कई प्रकार के कीट ट्रैप विकसित किए गए हैं। जिनमें प्रमुख हैं : इंसेक्ट प्रोब ट्रैप, इंसेक्ट पिटफाल ट्रैप, इंडीकेटर डिवाइस, अल्ट्रावायलेट लाइट ट्रैप एवं ऑटोमेटिक इंसेक्ट रिमूवल बिन। ये सभी प्रकार के ट्रैप दालों को कीड़ों से बचाते हैं। इन ट्रैप के पूरे विवरण कीटविज्ञान विभाग, तमिलनाडु कृषि विश्वविद्यालय, कोयम्बटूर को पत्र लिखकर प्राप्त किए जा सकते हैं।

(ग) सूर्य–ऊष्मा उपचार

सूर्य ऊष्मा उपकरण, काले कपड़े, टिन अथवा पोलीथीन सीट से बनाए जाते हैं इन्हें फर्श पर बिछाकर उस पर दाल की हल्की परत डाल दी जाती है। इससे सूर्य की गर्मी से तापमान 60^0से. तक हो जाता है। 3–4 घंटे के उपचार से कीड़ों की सभी अवस्थाएं मर जाती हैं और दाल कीट मुक्त हो जाता है। पोलीथीन में रखे हुए दाल का तापमान 650 से. हो जाता है और कीड़ों का पूर्ण नियंत्रण हो जाता

है। इससे 41 सप्ताह तक कीड़ों का प्रकोप नहीं होता है। दक्षिण अफ्रीका में प्रयोगों द्वारा पाया गया है कि सूर्य ऊष्मा के उपचार विभिन्न प्रकार के कीटनाशक दवाओं के बराबर हैं। जैसे 1.6 प्रतिशत प्रिमीफॉस मिथाइल, 0.3 प्रतिशत परमेथ्रिन के बराबर पाया गया है तथा 5 दिनों तक 4–5 घंटे का उपचार सभी कीड़ों को मार देता है लेकिन मौसम कई बार इसके परिणाम को प्रभावित करता है।

(घ) अक्रियाशील धूल मिलाना

20 प्रतिशत राख (भार के आधार पर) दालों में मिलाकर रखने से कीड़ों का प्रकोप नहीं होता है। राख की जगह बालू, चूना इत्यादि भी प्रयोग में लाया जा सकता है। फिलीपाइन्स में धान के भूसे की राख 1 प्रतिशत के हिसाब से मिलाकर रखने से दाल कीट मुक्त रहती है। राख कीड़ों के मोमी परत को खुरचकर खराब कर देती है, जिससे कीड़ों के शरीर से पानी का ह्रास होने से कीड़े सूखकर मर जाते हैं।

(ड.) खाने वाले तेल का प्रयोग

मूंगफली, मक्का, सरसों अथवा सोयाबीन के तेल को 0.5 प्रतिशत की दर से दालों पर लगाने से कीड़ों का पूर्ण नियंत्रण पाया जा सकता है। तेल अण्डों की श्वास प्रक्रिया को बाधित करती है। दूसरे, अण्डे दानों से नहीं चिपक पाते हैं जिससे दाने कीटमुक्त रह जाते हैं।

भंडारित अनाज में हानिकारक पक्षियों का प्रबंधन

भंडारित अनाज को मुख्यतः गोरैया, कबूतर व मैना द्वारा क्षति होती है। वे अपनी विष्ठा (बीट) आदि से भी अनाज को प्रदूषित करते हैं। इनके प्रकोप को कम करने के लिए चार तरह के उपाय हैं :

क. भौतिक

गोदाम या भंडार गृह की खिड़कियों व रोशनदानों में 0.6 सें.मी. की जालियां लगनी चाहिए। गोदाम के आस–पास पक्षियों के घोसलों को समय–समय पर नष्ट करते रहना चाहिए।

ख. जैविक उपाय

परभक्षी पक्षियों व जानवरों जैसे बाज, उल्लू, बिल्ली व कुत्तों की संख्या बढ़ानी चाहिए।

ग. रासायनिक उपाय

हानिकारक पक्षियों को मूर्छा लाने वाले पदार्थ क्लोराइड मिश्रित अनाज खिलाना चाहिए व मूर्छित होने पर मारना या दूर छोड़ देना चाहिए। इसी प्रकार अनाज में ओरिन्ट्रोल नामक रसायन को खिलाने से हानिकारक पक्षियों में बांझपन आने से उनकी संख्या कम हो जाती है।

घ. पक्षियों को दूर भगाना

इस विधि के अंतर्गत पत्थर फेंकना (हाथ से या गुलेल से) पुराने टिन के डिब्बों को पीटना, ऑक्सीजन एवं एसीटिलोन गैस के मिश्रण को यंत्र द्वारा अनियंत्रित अन्तराल पर आवाज करना, इलेक्ट्रॉनिक उपकरण द्वारा ऊंची आवाज टेप करके उन्हें चलाने से पक्षी भाग या उड़ जाते हैं। जहां पर व्यवहारिक हो वहां आदमी के पुतले लगाकर ही पक्षियों को भगाया जा सकता है।

घर एवं गोदाम में चूहा प्रबंधन

निरोधक उपाय

- घर और गोदाम को साफ–सुथरे रखें। चूहों को खाने की सामग्री एवं रहने का उचित स्थान न दें।
- घरों या गोदाम की नींव के पास कुछ ऊंचाई तक आवश्यकतानुसार पत्थर एवं कंकड़ के एक इंच से ज्यादा बड़े टुकड़े डालकर बनायें, जिससे चूहे आसानी से बिल न बना पायें।
- बाहरी दरवाजे व चौखट के 25 सें.मी. ऊंचाई तक आगे लोहे या एलुमिनियम की चादर लगवायें जिससे चूहे छिद्र न कर सकें।

नियंत्रण के उपाय

चूहों की संख्या कम करने के लिए घरों या गोदाम में दो प्रकार के उपाय किये जाते हैं।

चूहे दानी द्वारा नियंत्रण

- पहले उपाय के तौर पर चूहेदानी (पिंजड़ा) लगाकर

चूहों को मार देते हैं। बाजार में विभिन्न प्रकार की चूहेदानी या ट्रैप उपलब्ध हैं जैसे स्नैप ट्रैप (गर्दन तोड़ ट्रैप), लकड़ी का बाक्सनुमा ट्रैप, शरमन ट्रैप व वंडर ट्रैप।

- स्नैप ट्रैप लगाते समय यह ध्यान रखें कि पहले ट्रैप के खाने वाले स्थान पर रोटी या अन्य खाद्य सामग्री, ट्रैप के बिना सेट किये हुए रखें। जब चूहा एक बार खा ले तब अगले दिन सेट करें।
- लकड़ी के बाक्सनुमा ट्रैप, शरमन ट्रैप (लोहे का फोल्डिंग ट्रैप) व वंडर ट्रैप (कई चूहे एक साथ पकड़ने हेतु) में चारा डालकर पहले दिन से ही सेट करके रखें।
- ट्रैप लगाते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि उन्हें चूहों के सबसे ज्यादा आवागमन वाले रास्तों पर रखना चाहिए। उनमें जब चूहे फंस जाएं तो उन्हें अच्छी तरह धोकर ही दुबारा लगायें।
- आजकल बाजार में गोंदयुक्त बोर्ड ट्रैप भी उपलब्ध हैं जो कार्ड पर अत्यंत चिपचिपा पदार्थ पॉलीब्यूटीन (एन.–ब्यूटीलीन एवं आइसो–ब्यूटीलीन द्वारा निर्मित) लगाकर बनाये गये हैं यह पदार्थ खाने में हानिरहित है। ये ट्रैप चूहों के आने–जाने वाले रास्तों में रख देते हैं जिसमें चूहे फंस जाते हैं एवं निकल नहीं पाते हैं। यह महंगा परन्तु अच्छा परिणाम देने वाला ट्रैप है। इसे धूल रहित स्थान पर प्रयोग करना चाहिए।

विषयुक्त चारे द्वारा नियंत्रण

- चूहों को नियंत्रित करने के लिए दूसरा उपाय है कि उन्हें विषयुक्त चारा खिलाया जाए। घरों में पहले जिंक फॉस्फाइड युक्त चारा दिया जाता रहा है परन्तु इसकी मानव के प्रति विषाक्तता एवं आत्महत्या की घटनाओं को देखते हुए घरों में इसके प्रयोग को वर्जित कर दिया गया है। इसके स्थान पर दो अन्य प्रकार के चूहानाशियों के प्रयोग की अनुशंसा की गयी है। इनमें पहली बहु–खुराक वाली वारफारिन है एवं दूसरी एकल–खुराक वाली ब्रोमाडिलोन (मक्की) व ब्रोडीफैकस (टेलोन) है। ये आतंचनरोधी (एंटीकागुलेंट) हैं।
- वारफारिन का शुष्क प्रलोभन चारा (0.025 प्रतिशत) बनाने हेतु, वारफारिन एवं खाद्य पदार्थ को 1:19 के अनुपात में मिलाकर चारा तैयार करते हैं। इसमें 500 ग्राम चारा बनाने हेतु, वारफारिन की 25 ग्राम, आटे की 450 ग्राम, चीनी या गुड़ की 15 ग्राम एवं खाद्य तेल की 10 ग्राम मात्रा प्रयोग की जाती है। इस चारे की कम से कम 100 ग्राम मात्रा किसी मिट्टी के बर्तन या कागज में रखकर, चूहों के आने–जाने वाले स्थान पर रख देते हैं एवं 5 से 7 दिनों तक चारा वहीं रखा रहता है जिससे चूहे इस चारे को खाते रहें। चूहों का मरना एक सप्ताह बाद शुरू होता है।
- पानी या दूध में वारफारिन मिलाने के लिए इसकी एक भाग मात्रा पानी की 19 भाग मात्रा में मिलाकर रखते हैं। तेज गर्मी के माह में पानीयुक्त चारा ज्यादा कारगर सिद्ध होता है।
- एक खुराकीय आतंचनरोधी जैसी ब्रोमाडिलोन या ब्रोडीफैकस का 0.005 प्रतिशत चारा बनाने हेतु एक भाग विष एवं 49 भाग चारा सामग्री की मात्रा प्रयोग करते हैं। इसका 500 ग्राम चारा बनाने हेतु 10 ग्राम विष, 465 ग्राम आटा या टूटे चावल इत्यादि, 15 ग्राम गुड़ या चीनी, 10 ग्राम खाद्य तेल का प्रयोग किया जाता है। इसकी 5 से 10 ग्राम मात्रा चूहों के आने–जाने वाले स्थान पर रख देते हैं। पानी या दूध में मिलाने हेतु इस विष की एक ग्राम मात्रा को 49 भाग पानी या दूध में मिलाकर रखते हैं।

प्लास्टिक पलवार – औद्यानिकी फसलों के लिये वरदान

निशिथ गुप्ता, नीरजा पटेल एवं के.एस. भार्गव
रा.वि.सिं.कृ.वि.वि. –कृषि विज्ञान केन्द्र, देवास (म.प्र.)

काफी वर्षों से किसान उत्पादन तथा उत्पादकता बढ़ाने, मृदा में नमी संरक्षण करने, खरपतवार नियंत्रण करने एवं लागत को कम करने के लिये प्राकृतिक या कार्बनिक पलवार जैसे सूखी पत्ती, धान का पुआल, धान की भूसी, ज्वार की पत्तियॉ, घास, गन्ने की सूखी पत्तियाँ, सूखे नारियल के पत्ते आदि का उपयोग करते रहे हैं जिसे पलवार अथवा मल्चिंग कहते हैं। ये पलवार मृदा में सूक्ष्म जलवायु का निर्माण करते हैं, मिट्टी का तापमान एवं आर्द्रता को नियंत्रित करते हैं तथा मृदा में उपस्थित सूक्ष्म जीवों की गतिविधियों को बढाते हैं जो पौधों के वृद्धि व उपज को बढ़ाने में सहायक होते हैं। पलवार अथवा मल्च के द्वारा पौधों की जड़ां के चारों ओर भूमि को इस प्रकार से ढ़का जाता है जिससे कि उसके आसपास की भूमि में पर्याप्त मात्रा में नमी लंबे समय तक संरक्षित रहे, खरपतवार न उगें और पौधों के आसपास का तापमान सामान्य बना रहे।

पलवार (मल्चिंग) के प्रकार :

प्रयोग किये जाने वाले पदार्थों के आधार पर पलवार दो प्रकार के होते हैं।

1. **कार्बनिक या प्राकृतिक पलवार**–कार्बनिक पलवार के अंतर्गत फसल अवशेष, फसल उत्पाद, लकड़ी उद्योग के बचे उत्पाद आदि आते हैं। इनका पुनः उपयोग या अपघटन की समस्या नहीं होती है पर ये आसानी से उपलब्ध नहीं होते हैं।
2. **प्लास्टिक पलवार**–प्लास्टिक पलवार के अन्तर्गत प्लास्टिक फिल्म का उपयोग किया जाता है। ये विभिन्न रंगों व मोटाई में आसानी से उपलब्ध हैं।

प्राकृतिक पलवार की अधिक मात्रा में आसानी से उपलब्धता ना होने तथा अधिक लागत के कारण औद्यानिकी फसलों में प्लास्टिक पलवार का उपयोग आरंभ हुआ। प्लास्टिक पलवार आसानी से उपलब्ध हैं तथा एक जगह से दूसरी जगह ले जाने और बिछाने में भी आसान होते हैं। इन्हीं सभी गुणों के कारण वर्तमान में उद्यानिकी फसलों में प्लास्टिक पलवार का अधिकतर उपयोग हो रहा है।

प्लास्टिक पलवार (मल्चिंग) क्या हैः

प्लास्टिक मल्चिंग पौधों के चारों तरफ की भूमि को प्लास्टिक फिल्म से व्यवस्थित रुप से ढकने की क्रिया है। इसका उपयोग पैदावार बढ़ाने, नमी बनाये रखने एवं खरपतवार नियंत्रण में होता है।

मृदा के वातावरण में होने वाले परिवर्तनों का उपयुक्त मल्चिंग के उपयोग से अनुकूल बनाया जा सकता है। वर्तमान में प्रयोग में लाए जाने वाले प्लास्टिक फिल्म विभिन्न रंगों एवं मोटाई में उपलब्ध है। तुलनात्मक रूप से प्लास्टिक पलवार अन्य पलवारों से पूरी तरह से पानी के लिए अभेद्य है, इसलिए प्रत्यक्ष रूप से मिट्टी से नमी के वाष्पीकरण, पानी का कम उपयोग और मिट्टी कटाव को रोकती है। इस प्रकार पलवार जल सरंक्षण में एक सकारात्मक भूमिका निभाती है।

प्लास्टिक मल्चिंग (पलवार) के लाभ

- मृदा में नमी का संरक्षण
- पानी की बचत
- खरपतवार नियंत्रण
- मृदा के तापमान का नियंत्रण
- उत्पादन व उत्पादकता में वृद्धि
- उत्पाद के गुणवत्ता में सुधार
- फल सड़न से बचाने में सहायक

- मृदाजनित रोगों का नियंत्रण
- रसचूसक कीटों का नियंत्रण
- पाले से फसलों को बचाने में सहायक
- जड़ों का बेहतर विकास
- उर्वरकों का लीचिंग से होने वाले नुकसान को कम करने में सहायक

प्लास्टिक मल्चिंग (पलवार) के प्रकार :

1. **काली मल्चिंग (पलवार)** –यह व्यवसायिक उद्यानिकी में खरपतवार नियंत्रण के लिये उपयोग होने वाला प्रचलित रंग है। इस रंग का मल्च सूर्य की किरणों को अवषोषित करने के साथ दृष्य, इंफ्रारेड, पराबैंगनी प्रकाश को अवशोषित करता है। यह मल्च फिल्म सूर्य प्रकाश को मृदा में प्रवेश नहीं करने देता है, जिससे खरपतवारों का प्रकाश संष्लेषण नहीं हो पाता है तथा उसकी वृद्धि फिल्म के नीचे ही रुक जाती है।
2. **नीली मल्चिंग (पलवार)** – नीले रंग की मल्च में काले मल्च की तुलना में कद्दूवर्गीय सब्जियों में फलों की अधिक संख्या प्राप्त होती है। नीले रंग की मल्च से माहू तथा थ्रिप्स का प्रकोप फसलों पर कम होता है।
3. **पारदर्शी मल्चिंग (पलवार)** – यह पलवार बहुत कम सूर्य की किरणों को अवषोषित करती है। पानी की बूंदें संघनित होकर मल्च के अंदर रहती हैं तथा गर्मी बाहर नहीं आ पाती है। यह फिल्म सूर्य की किरणों को अंदर जाने देती है, जिससे खरपतवारों की वृद्धि इसमें मुख्य समस्या होती है। इस प्रकार के पलवार का उपयोग अधितर मृदा के सौर्य उपचार के लिये किया जाता है। ठंडे मौसम में खेती करने के लिये भी इसका उपयोग किया जा सकता है।
4. **दो पक्ष रंगीन पलवार**– इस प्रकार की पलवार चार प्रकार की होती है।
   (i) **सफेद/काली मल्चिंग (पलवार)**– इस प्रकार का पलवार प्रकाश को परावर्तित करता है, जिससे तापमान कम हो जाता है और यह फसल को ग्रीष्म ऋतु में वृद्धि करने में मदद करता है। मल्च का सफेद रंग उपरी सतह पर एवं काला रंग आंतरिक सतह पर फसल की उपज को बढ़ाता है, क्योंकि काला रंग खरपतवार की संख्या को कम करता है तथा सफेद रंग प्रकाश को परावर्तित करता है।
   (ii) **सिल्वर/काली मल्चिंग (पलवार)** – यह मल्च सामान्यतः मृदा को ठण्डक देने में मदद करता है। यह मल्च थ्रिप्स, एफिड, सफेद मक्खी आदि रसचूसक कीटों को हटाने में सहायक होता है, जो कि पौधों में विभिन्न वायरस जनित बीमारियों को फैलाने में माध्यम का कार्य करते हैं। कैनॉपी से प्रकाश को परावर्तित करने से यह मल्च ग्रीष्म ऋतु में फसल को तेज प्रकाश के घातक प्रभाव से बचाता है।
   (iii) **लाल/काली मल्चिंग (पलवार)** –यह मल्च अंशतः पारदर्शी होती है, जो कि विकिरणों को मृदा में प्रवेश होने देती है जिससे मृदा गर्म हो जाती है। लाल एवं इंफ्रारेड विकिरणों को बदलकर पौधों के छत्र से वापस परावर्तित करता हैं। यह परिणाम सब्जी, फूलों के पौधों में विकास एवं उपापचय द्वारा जल्दी फलन एवं कुछ फलों एवं सब्जियों में उपज बढ़ाने में सहायक है। लाल मल्च में यह देखा गया है कि इससे टमाटर की गुणात्मक एवं मात्रात्मक उपज में वृद्धि होती है तथा इससे टमाटर में अगेती अंगमारी होने की संभावना भी कम हो जाती हैं।
   (iv) **पीली/भूरी मल्चिंग (पलवार)** –भूरा रंग काले मल्च के समान कार्य करता है। यह खरपतवार नियंत्रण का कार्य करता है जबकि पीला मल्च प्रकाश को वितान से परावर्तित करके उपज को बढ़ाता है एवं विभिन्न रस चूसक कीटों को आकर्षित करता है।

प्लास्टिक पलवार की मोटाई :

मल्च फिल्म की मोटाई फसल के प्रकार और फसलों की उम्र के अनुसार निश्चित करना चाहिये। पलवार की मोटाई इतनी होनी चाहिये जो कि फसल के जीवनकाल को पूर्ण कर सके। विभिन्न फसलों के लिये मल्च फिल्म की मोटाई की अनुशंसा निम्नलिखित तालिका में दी गई है।

विभिन्न फसलों के लिये प्लास्टिक मल्चिंग (पलवार) की मोटाई

मोटाई (माइक्रोन)	अनुशंसित फसलें
7	मूंगफली
20–25	द्विवार्षिक (लघु अवधि की फसलें)
40–50	द्विवर्षिक (मध्यम अवधि की फसलें)
50–100	बहु–वार्षिक (लंबी अवधि की फसलें)

स्त्रोत : प्लास्टिक पलवार पर व्यवहारिक पुस्तिका, बागवानी में प्लास्टिक अनुप्रयोगों पर राष्ट्रीय समिति, कृषि मंत्रालय, भारत सरकार

प्लास्टिक मल्च फिल्म को लगाने की विधि :

प्लास्टिक मल्च को बीज बोने व रोपाई से पूर्व ही लगाया जाता है। इसको ऊंची क्यारी बनाने के बाद बिछा कर किनारे से दबा दिया जाता है। अगर यह प्रक्रिया हाथ से की जाती है तो समय व धन का काफी व्यय होता है। इसलिये वर्तमान में ट्रेक्टर से प्लास्टिक मल्चिंग (पलवार) बिछाने वाली मशीन भी उपलब्ध है।

(अ) सब्जी वाली फसलों में प्लास्टिक पलवार बिछाने की विधि :

सब्जी वाली फसलों में मुख्यतः 25–30 माईक्रोन वाली प्लास्टिक मल्च फिल्म का प्रयोग किया जाता है। सबसे पहले खेत को अच्छे तरह से तैयार करके मिट्टी के ढेले आदि को तोड़कर भुरभुरा बना लिया जाता है, फिर मजदूरों द्वारा या ट्रेक्टर चलित यंत्र द्वारा ऊंची उठी हुई क्यारियाँ बनाई जाती हैं। फिर इन क्यारियों के ऊपर सिंचाई के लिये ड्रिप की लैटरल पाईप को बिछाया जाता है। ड्रिप लैटरल को लगाने के बाद उचित रंग के प्लास्टिक मल्च फिल्म को श्रमिकों की सहायता से क्यारी के ऊपर बिछाया जाता है और दोनों किनारों पर दबा दिया जाता है। क्यारियों के ऊपर प्लास्टिक मल्च फिल्म को बिछाने के उपरांत लगाई जाने वाली सब्जी फसल के अंतराल के अनुसार मल्च फिल्म के ऊपर जी.आई. पाईप की सहायता से उचित स्थान पर छेद कर दिये जाते हैं। इस विधि द्वारा खेत में संपूर्ण क्यारियों में मल्चिंग की जाती है। प्लास्टिक मल्च को बिछाने के लिये श्रमिकों के साथ साथ ट्रेक्टर चलित यंत्र का प्रयोग भी किया जा सकता है। ये यंत्र ऊंची उठी हुई क्यारियों को बनाने के साथ साथ ड्रिप लैटरल लगाने तथा मल्च फिल्म बिछाने का कार्य एक साथ करते हैं। छेद करने वाले प्लांटर भी उपलब्ध हैं जिससे मल्च किये हुए क्षेत्र में छेद करने का कार्य हो जाता है। इसके बाद बीज या पौध का रोपण इन छिद्रों में कर दिया जाता है।

(ब) फलदार फसलों में प्लास्टिक पलवार बिछाने की विधि :

फल वाली फसलों में सामान्यतः 100 माईक्रोन मोटाई वाली प्लास्टिक मल्च फिल्म का प्रयोग किया जाता है। फलदार वृक्षों में पलवार उपयोग पौधे के आच्छादन के अनुसार करना चाहिये। लम्बाई एवं चौड़ाई को बराबर रखते हुऐ प्लास्टिक मल्चिंग (पलवार) को काटना चाहिये। इन फसलों में मल्च फिल्म को मुख्यतः हाथों द्वारा ही पौधों के चारों तरफ बिछाया जाता है। इसमें सामान्यतः फसलों के वितान क्षेत्र के विस्तार के कम से कम 50 प्रतिशत जड़ क्षेत्र में लगाने की अनुसांा की जाती है। सबसे पहले पौधे के चारों तरफ की जगह को खरपतवार तथा घासफूस इकठ्ठा करके साफ किया जाता है। फिर एक छोटी नाली पौधे के चारों तरफ बनाया जाता है जिससे कि मल्च फिल्म को लगाकर आसपास की मिट्टी से दबाया जा सके। मल्च फिल्म के एक सिरे से चौड़ाई वाले भाग में बीच से आधी मल्च फिल्म को काटकर पेड़ के तने के पास लगाते हैं तथा कटी हुई फिल्म को 10–15 सेमी दूसरी सतह पर आच्छादित करके मिट्टी से ढ़क दिया जाता है।

प्लास्टिक पलवार का फसल पर प्रभाव :

सुनियोजित कृषि विकास केन्द्र (पीएफडीसी) के विभिन्न केन्द्रों पर किये गये अनुसंधानो से ज्ञात हुआ है कि प्लास्टिक पलवार फसलों की उपज 25 से 70 प्रतिशत तक बढाता है। इस प्रकार के अनुसंधान का एक विवरण निम्नलिखित तालिका में दिया हुआ है।

प्लास्टिक पलवार का फसल उपज पर प्रभाव

फसल	पलवार मोटाई (माइक्रोन)	उपज में वृद्धि (प्रतिशत)	फसल	पलवार मोटाई (माइक्रोन)	उपज में वृद्धि (प्रतिशत)
सब्जी फसलें			**फल वाली फसलें**		
मिर्च	25	50–60	अमरुद	100	25–30
आलू	25	35–40	अनार	100	35–40
फूल गोभी	25	40–50	आम	100	40–50
पत्तागोभी	25	35–40	पपीता	100	60–65
टमाटर	25	45–50	बेर	100	25–30
शिमला मिर्च	25	35–45	केला	100	30–35
भिण्डी	25	50–60	लीची	100	10–15
बैंगन	25	30–35	अन्नानास	100	30–35
करेला		25–30	किन्नो	100	45–50
अन्य फसलें			आड़ू	100	30–35
गन्ना	50	50–55	स्ट्रॉबेरी	25	40–50
मूंगफली	07	60–70			

स्त्रोत : सुनियोजित खेती विकास केन्द्रों (पीएफडीसी) पर किये गए अनुसंधानों पर आधारित

पिगमेंटेड चावल में संशोधन द्वारा स्टार्च मूल्य संवर्धनः मानव पोषण में सुधार करने का वादा

मोनिका जॉली, वेदा कृष्णन एवं अर्चना सिंह
जैव रसायन विभाग,
भा.कृ.अ.प–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान पूसा, नई दिल्ली –110012

भारतीय लोगों के बीच चावल एक बहुत ही महत्वपूर्ण फसल है। चावल अधिकांश लोगों के लिए मुख्य भोजन है, यह हमारी संस्कृति और समाज का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। चावल 33 विकासशील देशों में प्रमुख भोजन है, जो 27 प्रतिशत आहार ऊर्जा की आपूर्ति, 20 प्रतिशत आहार प्रोटीन और 3 प्रतिशत आहार वसा प्रदान करता है। चावल का उत्पादन ज्यादातर लघु सीमांत कृषक के हाथ में है। ग्रामीण क्षेत्रों में अधिकांश कृषि श्रमिकों की आजीविका चावल उत्पादन से संबंधित है। चावल में शुष्क भूमि में उगने वाले चावल से लेकर विभिन्न प्रकार की किस्में होती हैं जो तटीय क्षेत्रों में विकसित हो सकती हैं। 40,000 से अधिक चावल की किस्मों को आसानी से पाया जा सकता है और दुनिया भर में 90% से अधिक चावल का उत्पादन और खपत एशिया में की जाती है। चावल आहार में थियामिन, राइबोफ्लेविन, नियासिन और जस्ता की वृद्धि मात्रा में महत्वपूर्ण योगदान करता है । इसमें अन्य सूक्ष्म खनिज एवं पोषक तत्वों की बहुत कम मात्रा होती है जिसे हमेशा ध्यान में रखना होता है। कई कारक चावल की पोषक सामग्री को प्रभावित करते हैं, जिसमें कृषकों द्वारा, कृषि पद्धतियां, कटाई के बाद की स्थिति और हैंडलिंग शामिल हैं। चावल की पोषक संरचना को प्रभावित करने वाले अनेक कारक हैं। (Fig 1)

अध्ययन बताते हैं कि कृषि पद्धतियाँ चावल के दाने की पोषक संरचना को प्रभावित कर सकती हैं। नियंत्रित प्रयोगों में पाया गया है कि मृदा नाइट्रोजन, सौर विकिरण, पौधों की परिपक्वता की डिग्री, उर्वरक का अनुप्रयोग और कम परिपक्वता अवधि प्रोटीन को प्रभावित करती है। लौह और जस्ता सामग्री भी नाइट्रोजन अनुप्रयोग और मिट्टी की गुणवत्ता से प्रभावित होती है। एक बार जब चावल की कटाई हो गई, तो भंडारण, प्रसंस्करण, धुलाई और खाना पकाने की प्रथाएं सभी इसकी पोषण गुणवत्ता को प्रभावित कर सकती हैं फिर भी, फसल के बाद के नुकसान को पोषण सम्बन्धी आकलन शायद ही कभी ध्यान में रखा गया है। मिलिंग की कई डिग्री हैं जो उपभोक्ता और वांछित चावल की सफेदी या अपारदर्शिता पर निर्भर करती हैं। मिल्ड राइस को पॉलिश या व्हाइटड के रूप में संदर्भित किया जाता है और चमकाने के विभिन्न डिग्री या अंश होते हैं – सफेद चावल का तात्पर्य 8 से 10 % ब्रान हटाने के बीच होता है। सामान्य तौर पर, चावल के चोकर

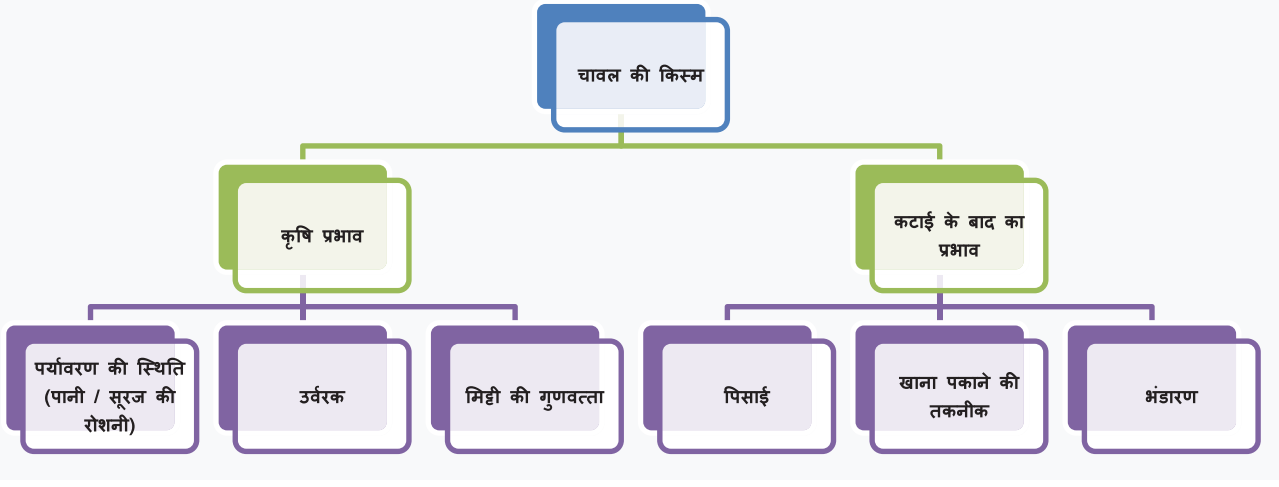

Fig 1: चावल पोषक संरचना प्रभावित करने वाले अनेक कारक।

को पॉलिश करने के दौरान दाने से हटा दिया जाता है, जिसके कारण अधिक विटामिन और खनिज खो जाते हैं। मिलिंग के कारण प्रोटीन लगभग 10 से 15 % के बीच नष्ट हो जाता है। मिलिंग या भंडारण से पहले, चावल को चंतइवपस किया जा सकता है – एक प्रक्रिया जिसमें चावल को गर्म पानी में भिगोना, भाप देना और सूखना शामिल होता है।खाना पकाने से पहले च्ंतइवपसपदह, चावल पोषक तत्व में से कुछ को संरक्षित करता है, क्योंकि माइक्रोन्यूट्रिएंट्स को एलेरोन (समनतवद) से स्टार्ची एंडोस्पर्म में स्थानांतरित किया जाता है।

सफेद चावल की आपूर्ति कैल्शियम, फोलेट और लोहे के अनुशंसित पोषक तत्व सेवन प्दजांम (आर. एन. आई) का 2–5%; राइबोफ्लेविन, थायमिन और नियासिन के आर.एन.आई. का 9–17% और जस्ता के आर.एन.आई. का 21% चावल विटामिन सी या ए प्रदान नहीं करते हैं। भूरे रंग के चावल में अधिक पोषक तत्व हैं लेकिन फाइटेट की अधिक मात्रा के कारण, कई पोषक तत्वों की जैव उपलब्धता घट जाती है, विशेष रूप से लोहा, जस्ता और कैल्शियम जिससे यह रासायनिक रूप से बंध जाता है।पोषक तत्वों की जैव उपलब्धता के संदर्भ में भूरे और सफेद चावल के अंतर की पूरी समझ हासिल करने के लिए आगे अधिक विश्लेषण की आवश्यकता है। जबकि पोषण से भरपूर चावल की किस्मों की उपलब्धता में वृद्धि हुई है, फिर भी पौष्टिक चावल के वैज्ञानिक ज्ञान की कमी है। जी आई खाद्य पदार्थों में कार्बोहाइड्रेट की एक रैंकिंग है कि वे रक्त शक्रा के स्तर को कैसे प्रभावित करते हैं। 55 से कम का जी आई मान कम माना जाता है, और 70 से अधिक उच्च जी आई संस्करण माना जाता है। सबसे बड़ा विश्लेषण एक ब्राउन राइस ब्रांड था जिसने बहुत कम ग्लाइसेमिक इंडेक्स (जी आई) घोषित किया था जो की सही नहीं है।

आमतौर पर खपत चावल किस्मों के जीआई का अध्ययन करने और कम जीआई मूल्य के चावल को विकसित करने की तत्काल आवश्यकता है। सभी को समझने की जरूरत है कि:

- सभी भूरे चावल निम्न जीआई के साथ नहीं हो सकते हैं।
- दूसरी गलत धारणा यह है कि चंतइवपसमक चावल स्वास्थ्य के लिए अच्छा है। लेकिन निष्कर्ष बताते हैं कि इसमें पॉलिश किए हुए सफेद चावल के समान जीआई होता है"। च्ंतइवपसपदह विटामिन बी को बढ़ाने और लंबी शैल्फ जीवन के लिए किया जाता है, लेकिन यह रोगाणु और चोकर की परत को हटा देता है, जिसके परिणामस्वरूप उच्च जीआई होता है।
- अन्य लम्बे दावे चीनी मुक्त और शून्य कोलेस्ट्रॉल चावल विकल्प हैं।
- किसी भी पौधे के भोजन में प्रत्यक्ष कोलेस्ट्रॉल नहीं होता है, लेकिन अधिक मात्रा में वे ट्राइग्लिसराइड और कोलेस्ट्रॉल के स्तर को बढ़ा सकते हैं। चावल में स्टार्च पाचन पर ग्लूकोज में परिवर्तित हो जाता है, इसलिए वास्तव में चीनी मुक्त चावल नहीं हो सकता है।
- इसका मतलब है कि पैकेट पर लेबल से गुमराह न हों और चावल को मॉडरेशन में खाने की जरूरत है।
- हाल के निष्कर्षों में यह भी कहा गया है कि चावल पकाने का पारंपरिक तरीका जो पहले चावल को भिगोने और फिर बर्तन में पकाने से स्वास्थ्यप्रद तरीका है क्योंकि धीमी गति से खाना पकाने से जीआई समस्या पर भी काबू पाने में मदद मिलती है।
- अध्ययनों से पता चला है कि उच्च फाइबर सफेद चावल (HFWR) के स्थान पर नियमित रूप से सफेद चावल (RWR) एशियाई भारतीयों के लिए एक स्वस्थ विकल्प हो सकता है जो टाइप 2 मधुमेह के रोगी हैं।

इन दिनों सूक्ष्म पोषक कुपोषण के कई रूपों, जैसे लोहा, विटामिन ए और जिंक की कमी के वैश्विक प्रसार की अधिक मान्यता है। चावल प्रौद्योगिकी में सुधार में विभिन्न प्रकार के दृष्टिकोण शामिल हैं, अर्थात पौध प्रजनन के माध्यम से पोषण की गुणवत्ता को बढ़ाना आनुवंशिक संशोधन के माध्यम से अनाज की सूक्ष्म पोषक सामग्री में वृद्धि और चावल फोर्टिफिकेशन तकनीक में सुधार। चावल कार्बोहाइड्रेट और बी विटामिन का एक अच्छा स्रोत है, और नई तकनीकी सफलताओं के माध्यम से इसमें अन्य पोषक तत्वों की अधिक मात्रा में आपूर्ति करने की क्षमता भी है। बासमती चावल और ब्राउन राइस में सभी

चावल के प्रकारों में सबसे कम जी आई (ग्लाइसेमिक इंडेक्स) होता है, जिसका अर्थ है कि एक बार पचने पर यह रक्त शक्ररा के स्तर को और अधिक स्थिर रखते हुए धीरे–धीरे अपनी ऊर्जा जारी करता है, जो मधुमेह प्रबंधन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। भूरे, बैंगनी और लाल चावल के चोकर के अक्र, दो पाचक एंजाइमों के अवरोध को प्रभावित करते हैं जो मधुमेह के लिए जिम्मेदार हैं। अंत में, व्यावहारिक स्तर पर, समृद्ध उत्पाद न केवल उपलब्ध होना चाहिए, बल्कि सस्ती और स्वादिष्ट भी होना चाहिए। वैज्ञानिक इस पहलू पर काम कर रहे हैं और कुछ उत्पाद आ रहे हैं जो सूक्ष्म पोषण की कमी को बढ़ाएंगे।

हाल ही में, अनुसंधान ने प्रधान फसलों के सुधार के माध्यम से आबादी की पोषण की स्थिति में सुधार करने की ओर ध्यान दिया है। यह समझा जाता है कि पोषक तत्वों की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए विभिन्न प्रकार के खाद्य पदार्थों की आवश्यकता होती है। मुख्य खाद्य पदार्थों विशेष रूप से चावल की पोषक सामग्री में सुधार के लिए तर्क महत्वपूर्ण है क्योंकि वे दुनिया की अधिकांश आबादी, विशेष रूप से गरीबों के लिए व्यापक रूप से उपलब्ध और सस्ती हैं। इसके अतिरिक्त सबसे अधिक आर्थिक रूप से वंचित लोगों के आहार में मुख्य खाद्य पदार्थों से कैलोरी का अधिक अनुपात होता है इसलिए इन खाद्य पदार्थों के सूक्ष्म पोषक घनत्व में वृद्धि को उनके पोषण प्रोफाइल में सुधार के लिए एक रणनीति के रूप में देखा जाता है। आज तक बायोएक्टिव की खोज ज्यादातर औषधीय पौधों, एन्थोसाइनिन रिच बेरीज आदि में की गई है, लेकिन स्टेपल फूड विशेष रूप से चावल में बायोएक्टिव से निपटने की आवश्यकता है। हालांकि हाइपरग्लाइसेमिया को कम करने में पिगमेंटेड चावल की संभावित भूमिका मौजूद है, लेकिन हमें स्टार्च की गुणवत्ता के साथ–साथ पॉलीफेनोल्स के न्यूट्री जीनोमिक्स में भिन्नता का अध्ययन तथा चावल का फोर्टिफिकेशन करने की आवश्यकता है। हाल ही में, अनुसंधान ने प्रधान फसलों के सुधार के माध्यम से आबादी की पोषण की स्थिति में सुधार करने की ओर ध्यान दिया है। यह समझा जाता है कि पोषक तत्वों की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए विभिन्न प्रकार के खाद्य पदार्थों की आवश्यकता होती है। इसके अतिरिक्त आर्थिक रूप से वंचित लोगों के आहार में मुख्य खाद्य पदार्थों विशेष रूप से चावल से कैलोरी प्राप्त करने का अधिक अनुपात होता है। इसलिए, इन खाद्य पदार्थों के सूक्ष्म पोषक घनत्व में वृद्धि द्वारा उनके पोषण प्रोफाइल में सुधार के लिए एक रणनीति के रूप में देखा जाता है। इन दिनों भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद –भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान संगठन ने 'आनुवांशिक संशोधन' का उपयोग करके पौष्टिक रूप से समृद्ध चावल का उत्पादन करने के लिए काम हो रहा है। यह हमारे कृषि वैज्ञानिकों का सबसे बड़ा योगदान है क्योंकि वैज्ञानिक इस पहलू पर काम कर रहे हैं और कुछ उत्पाद आ रहे हैं जो सूक्ष्म पोषण की कमी को बढ़ाएंगे इसी संस्थान में जैव रसायन संभाग में चावल के गुणकारी स्टार्च को बढ़ाने के आयाम मे एंजाइम पुलअनेज द्वार एक सम्बंधता प्रतिरोधी स्टार्च से स्थापित की गई है। ये सब वैज्ञानिक आविष्कार चावल खाने वाले वर्ग एवं मधुमेह ग्रसित वर्ग के लिए लाभकारी साबित होंएंगे। जरूरत है उपभोक्ताओं के जागरूक होने की।

प्राकृतिक विटामिन–ई की कुशल और लागत प्रभावी निष्कर्षण विधि

नविता बंसल, मोनिका जौली एवं अर्चना सचदेव
जैव रसायन विभाग
भा.कृ.अ.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली –110012

एंटीऑक्सिडेंट, फ्री रेडिकलस (प्रतिक्रियाशील ऑक्सीजन प्रजातियों) से उत्पन्न ऑक्सीडेटिव क्षति को रोकने में एक प्रमुख भूमिका निभाते हैं जो कि कैंसर, हृदय रोगों, स्मृति हानि, आंखों के रोगों और उम्र बढ़ने सहित कई बीमारियों का आधार है। हमारे पास बहुत सारे प्राकृतिक और सिंथेटिक एंटीऑक्सिडेंट्स विकल्प उपलब्ध हैं लेकिन इन सबमे विटामिन – ई (विट–ई) एक प्रमुख प्राकृतिक एंटीऑक्सिडेंट है जो फ्री रेडिकलस से अभिक्रिया करके ऑक्सीडेटिव क्षति को रोकता है और इसलिए हमारे शरीर पर उनके हानिकारक प्रभाव को सीमित या विलम्बित करता है।विटामिन ई (विट–ई) एक प्रभावशाली , वसा में घुलनशील एंटीऑक्सीडेंट है, जो फ्री रेडिकल से होने वाले नुकसान के खिलाफ कोशिका झिल्ली की रक्षा करता है। यह आहार पूरक के रूप में बेचे जाने वाले पहले दो एंटीऑक्सिडेंट यौगिकों में से एक है, दूसरा विटामिन सी है। एंटीऑक्सीडेंट भूमिका के अलावा, विट–ई में कई अन्य जैविक गतिविधियां हैं जिनमें एंटी–इन्फ्लेमेटरी, एंटी–मोटापा,एंटी–हाइपरग्लाइसेमिक, एंटी–हाइपरटेंसिव और एंटी–हाइपरकोलेस्टेरोलेमिक शामिल हैं। एक वयस्क के लिए वीट–ई की दैनिक आवश्यकता 15 मिलीग्राम है और इसे प्राकृतिक रूप से नट्स (बादाम, मूंगफली और हेजलनट्स) और खाद्य तेलों से प्राप्त किया जा सकता है, जिनमें मुख्य रूप से सोयाबीन, सूरजमुखी का तेल या विट–ई फोर्टीफाइड आहार (स्रोतरू यूएस नेशनल लाइब्रेरी ऑफ मेडिसिन) हैं। प्राकृतिक विटामिन ई एक एकल आइसोमर है, जो मुख्य रूप से वनस्पति तेलों, नट्स, पत्तेदार सब्जियों, फलों आदि जैसे खाद्य स्रोतों से निकाला जाता है। प्रकृति में पाया जाने वाला विटामिन ई अल्फा–टोकोफेरॉल के रूप में मौजूद है। प्राकृतिक विटामिन ई रासायनिक रूप से अद्वितीय और जैविक रूप से प्रभावी है।सिंथेटिक विटामिन ई आम तौर पर खाद्य स्रोतों से प्राप्त नहीं किया जाता है और ट्राइमेथिलहाइड्रकिनोन के साथ आइसोफाइटपोल की प्रतिक्रिया से पेट्रोकेमिकल्स से तैयार किया जाता है। सिंथेटिक विटामिन ई शरीर में स्वास्थ्य लाभ प्रदान करने में कम प्रभावी होते हैं। यह प्राकृतिक विटामिन की तुलना में शरीर द्वारा आसानी से उपयोग नहीं किया जाता है, इसलिए विटामिन ई के अवशोषण और उपयोग में एसकी कमी होती है।

प्राकृतिक विटामिन ई की जैव–उपलब्धता सिंथेटिक विटामिन की तुलना में लगभग 2:1 है। मानव शरीर दृढ़ता से प्राकृतिक और सिंथेटिक विटामिन रूप के बीच भेदभाव करता है, दोनों ही रूपों को शरीर में अवशोषित किया जाता है लेकिन अवशोषण के बाद, एक विशिष्ट प्रोटीन (अल्फा–टीटीपी) केवल विटामिन ई के प्राकृतिक रूप को पहचानता है। अध्ययनों से पता चलता है कि सिंथेटिक विटामिन ई की अवधारणा कम है, इसलिए किसी व्यक्ति या जानवर को प्राकृतिक रूप की जैवउपलब्धता से मेल खाने के लिए सिंथेटिक विटामिन–ई की दोगुना मात्रा लेना पड़ता है।

2016 में वैश्विक प्राकृतिक विटामिन–ई (विट–ई) बाजार का मूल्य 820.18 मिलियन अमरीकी डालर था, 2018–23 के दौरान 5.2% की अपेक्षित सीएजीआर (मिश्रित वार्षिक वृद्धि दर) के साथ। वाणिज्य मंत्रालय के 2014 के आंकड़ों के अनुसार, भारत ने चीन, अमेरिका और जर्मनी से 12.69 मिलियन अमरीकी डालर का विटामिन–ई मूल्य 29 से 96 मिलियन अमरीकी डालर प्रति किलोग्राम की दर से आयात किया और जिसका उपयोग दवाओं, भोजन, पेय पदार्थों और सौंदर्य प्रसाधन में भी किया गया ।

प्राकृतिक विटामिन–ई की भारी मांग सिंथेटिक विटामिन–ई की <50% कम जैविक गतिविधि के कारण है। इसलिए प्राकृतिक विटामिन–ई का अधिक उत्पादन करना महत्वपूर्ण है।

भारत में विट–ई का घरेलू उत्पादन कई कारणों से गति नहीं ले रहा है, जैसे उच्च उत्पादन लागत के लिए कुशल प्रोटोकॉल की अनुपलब्धता। विट–ई के निष्कर्षण के कई तरीके पौधे की प्रजातियों और ऊतकों के प्रकार के आधार पर उपलब्ध हैं। हालांकि सैंपल तैयार करने के दौरान, विट–ई के स्थिरीकरण के लिए आवश्यक बिंदुओं पर विचार करना महत्वपूर्ण है, क्योंकि विट–ई प्रकाश के प्रति अत्यधिक संवेदनशील है और फोटो–ऑक्सीकरण द्वारा खराब हो जाता है। हमने सोया उत्पादों से प्राकृतिक विट–ई के कुशल और लागत प्रभावी निष्कर्षण के लिए लैब स्केल प्रत्यक्ष विलायक निष्कर्षण विधि विकसित की है। इस प्रोटोकॉल को औद्योगिक स्तर पर अप–स्केलिंग की आवश्यकता है। हमारी प्रयोगशाला में इन तथ्यों को ध्यान में रखते हुए, प्राकृतिक स्रोतों से विटामिन–ई के निष्कर्षण का एक आर्थिक रूप से व्यवहार्य तरीका विकसित किया गया है।

प्रत्यक्ष विलायक निष्कर्षण विधि विभिन्न पौधों की प्रजातियों से विट–ई निष्कर्षण के लिए उपयोग की जाने वाली सबसे लोकप्रिय विधि है हमारी प्रयोगशाला में हमने एक सॉल्वेंट एक्सट्रैक्शन प्रक्रियाओं को विकसित किया है, जिसमें मूल रूप से तीन चरण शामिल हैंरू सैंपल प्रिपरेशन, निष्कर्षण, सॉल्वेंट सोलुबलाइजेशन और इस विधि को सोयाबीन के बीज (विनुथा एट अल 2015) से विट–ई निकालने के लिए मानकीकृत किया गया है। सोयाबीन के सैंपल से विटामिन–ई के निष्कर्षण और विश्लेषण की विस्तृत विधि नीचे दी गई है।

विटामिन– ई की पोषक तत्वों एवं ऑक्सीडेटिव क्षति से संबंधित बीमारियों और विकारों को रोकने में इसकी भूमिका को ध्यान में रखते हुए, विटामिन ई से भरपूर आहार का ई सप्लीमेंट या सेवन उच्च कोलेस्ट्रॉल, हाइपोग्लाइसीमिया, मोटापा और उससे जुड़े रोग जैसे हृदय सम्बन्धी रोग स्तर की रोकथाम में मदद करने के लिए एक उपयुक्त रणनीति होगी। इस लक्ष्य को हासिल करने के लिए हमे प्राकृतिक विटामिन–ई का उत्पादन करना बहुत जरुरी है।

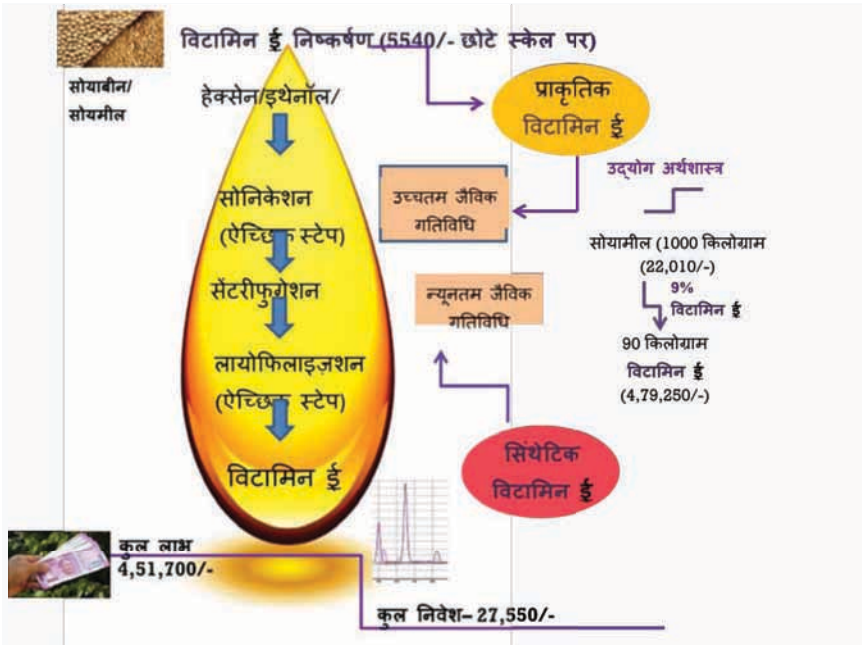

विट–ई का प्रत्यक्ष विलायक निष्कर्षण विधि दिखाने के लिए योजनाबद्ध आरेख

मृदा रहित खेती में अभिनव प्रौद्योगिकियाँ

रणबीर सिंह एवं रामेश्वर दयाल मीणा
फार्म संचालन सेवा इकाई, शाकीय विज्ञान संभाग
भा.कृ.अनु.प.–भा.कृ.अनु.सं., पूसा, नई दिल्ली–12

भारत विश्व में जनसंख्या की दृष्टि से दूसरे स्थान पर है। भारत में दिन–प्रतिदिन जनसंख्या बढ़ती जा रही है और कृषि योग्य भूमि सिकुड़ती जा रही है। बढ़ती जनसंख्या का पेट भरने की चुनौती हमारे सामने मुँह बाए खड़ी है। वर्ष 2030 तक हमारी जनसंख्या वर्तमान जनसंख्या से 25 प्रतिशत अधिक हो जाएगी, जबकि खेती के लिये उतनी ही भूमि उपलब्ध रहेगी। वर्ष 2025 में हमें 30.10 करोड़ टन खाद्यान्नों की आवश्यकता होगी, क्योंकि कृषि क्षेत्र में बहुत बढ़ाना संभव नहीं है। पिछले कुछ दशकों से भारत में जोत जाने वाले खेतों का क्षेत्रफल 14 करोड़ हेक्टेयर पर लगभग स्थिर बना हुआ है। इसका अर्थ है कि कृषि योग्य भूमि में वृद्धि की कम संभावना है। जिसके परिणामरूप वर्तमान उत्पादन प्रणालियों को ही प्रखर बनाना होगा, जो कि एकमात्र संभावना है। सम्पूर्ण जनसंख्या भरण–पोषण के लिये खेती योग्य भूमि कम पड़ रही है तो खेती की भूमि को पूरा करने के लिए शुरुआत हो गई है, वर्टिकल खेती, हाइड्रोपोनिक्स एवं एरोपोक्सि खेती की। भारत में पिछले कुछ वर्षो में उक्त तकनीकियों का सूत्रपात हुआ है, जैसेः

खड़ी खेती (वर्टिकल खेती)

वर्टिकल खेती को सामान्य भाषा में खड़ी भी कह सकते है। इस प्रकार की वर्टिकल फार्मिंग में उगाई गई सब्जियां और फल खेतों की तुलना में अधिक पोषक और ताजे होते हैं। अगर ये खेती छत पर की जाती है तो इसके लिए तापमान को नियंत्रित करना होगा। वर्टिकल खेती बहुत ही सकारात्मक है जिसमें लोग अपनी छतों पर भी अपने उपयोग हेतु सब्जियां पैदा कर सकेंगे। इसके लिए न तो मिट्टी की आवश्यकता होगी और न ही तेज धूप की। इसके अंतर्गत टमाटर, चिली, कॉली फ्लावर, ब्रोकली, चीनी कैबेज, पोकचाई बेसिल, रेड कैबेज आदि को उगाया जा सकता है। खड़ी खेती या वर्टिकल फार्मिंग के माध्यम से कम भूमि में अधिक उत्पादन का सफल प्रयोग किया जा रहा है। इसमें सबसे अच्छी बात यह भी हैं कि इसमें रासायनिक उर्वरक और कीटनाशक दवाओं का उपयोग नहीं होता। इससे कम भूमि वाले खेतीहर किसान को अधिक लाभ मिल सकता है। खड़ी खेती के माध्यम से किसान की आय भी बढ़ाई जा सकती है।

खड़ी खेती की प्रक्रियाः खड़ी खेती या वर्टिकल फार्मिंग में एक बहु–सतही ढांचा तैयार किया जाता है। इस ढांचे के सबसे निचले हिस्से में जल से भरा टैंक रख दिया जाता है। टैंक के ऊपरी खानों में पौधों के छोटे–छोटे गमले रखे जाते हैं। पाइप के द्वारा इन गमलों में उचित मात्रा में जल पहुंचाया जाता है जिसमें पोषक तत्व मिले होते हैं जो पौधों को शीघ्र बढ़ने में सहायता करते हैं। एलइडी बल्ब के द्वारा कृत्रिम प्रकाश बनाया जाता है। वर्टिकल तकनीकी खेती में मिट्टी की आवश्यकता नहीं होती। यह खुले वातावरण में हो सकती हैं। इसमें मकानों एवं भवनों की दीवारों का उपयोग कुछ फसलों के पौधे उगाने के लिए किया जा सकता है।

चित्र 1. खड़ी खेती का दृश्य

खड़ी खेती के लाभ

- बढ़ती जनसंख्या और कम होती कृषि योग्य भूमि भविष्य की एक बहुत बड़ी समस्या होगी। आने वाले समय में खेती योग्य भूमि बहुत कम होगी ऐसे समय में वर्टीकल खेती या खड़ी खेती ही हमारी इस समस्या का समाधान कर सकता है।
- खड़ी खेती के माध्यम से कम भूमि में अधिक उत्पादन किया जा सकता है।
- खड़ी खेती में बनावटी प्रकाश और बनावटी पर्यावरण का निर्माण किया जाता हैं, जिसके कारण मौसम संबन्धी समस्याओं से संरक्षण प्राप्त होता है।
- परम्परागत खेती में कई प्रकार के रासायनिक उर्वरक और खतरनाक कीटनाशक दवाओं का उपयोग होता है। जिससे तरह–तरह की बीमारियाँ फैलती है। खड़ी खेती में रासायनिक उर्वरक और कीटनाशक दवाओं का उपयोग नहीं होता है और इसमें उत्पादित सामान स्वास्थ के लिए लाभदायक होता है।
- खड़ी खेती के कारण से जब कम भूमि में उत्पादन अधिक होगा तो किसानों की आय बढ़ेगी और उनके जीवन स्तर में सुधार आएगा।
- इस प्रकार की खेती में जल की आवश्यकता बहुत कम होती है। कम वर्षा वाले स्थानों के लिए खड़ी खेती एक सही विकल्प हो सकता है।
- खड़ी खेती में मजदूर की आवश्यकता कम होती है क्योंकि यह स्वचालित प्राविधि पर आधारित खेती है।
- वर्ष भर फूल वाली फसलें तथा आलू, टमाटर और पत्तेदार सब्जियां इत्यादि उगाई जा सकती हैं।
- यदि आप कृषि व्यवसाय के बारे में सोच रहे हैं तो खड़ी खेती आपके लिए एक विकल्प हो सकता है। अभी भारत में बहुत कम लोग इसके बारे में जानते हैं और कुछ लोग खड़ी खेती से करोड़ों रुपये कमा चुके हैं।
- यह खेती में अनुसंधान का नया विषय एवं आय का स्रोत भी है।

खड़ी खेती के सिद्धांत

- जोत में उपलब्ध क्षैतिज स्थान के साथ ऊर्ध्वाधर स्थान का सर्वोत्तम उपयोग।
- एक ही समय में दो फसलों की खेती एक साथ।
- छाया में उगाई जाने वाली फसलों का चुनाव।
- प्रत्येक वर्ष फसल परिवर्तन अपनाना।
- फसल की बुवाई हेतु रिले पद्धति अपनाना।

भारत में खड़ी खेती का भविष्यः खड़ी खेती भारत में एक खेती का नया कदम है, कुछ कृषि विश्वविद्यालयों में इन पर अनुसंधान चल रहा है और कुछ या बहुत कम व्यावसायिक खड़ी खेती कर रहे हैं। इस प्रकार की खेती को एक व्यवसाय के रूप में भी देखा जाता है। इस प्रकार की खेती करने के लिए खड़ी खेती की तकनीकी ज्ञान का होना आवश्यक है। विश्व में शहरों का विस्तार तेज होने से परिनगरीय खेती का प्रचलन बढ़ता जा रहा है। छतों पर पार्किंग में या फिर कहीं भी उपलब्ध सीमित स्थान का उपयोग अब सब्जियों की खेती में किया जा रहा है। ऐसा एक खास तकनीक के उपयोग से संभव होता है। छोटी जोतों को आर्थिक रूप से लाभदायक बनाने की संकल्पना इन जोतों में उपलब्ध उर्ध्वाधर स्थान के सर्वोत्तम उपयोग पर आधारित है। ऐसी खेती में उर्ध्वाधर स्थान सीमित रहता है और उसमें किसी भी प्रकार की वृद्धि नहीं की जा सकती है, परन्तु इन्हीं खेती में उपलब्ध उर्ध्वाधर स्थान का प्रयोग करके उसी खेती से अच्छी आमदनी प्राप्त की जा सकती है। ऐसी खेती के लिए उर्ध्वाधर स्थान का प्रयोग करने के लिये बांस, लकड़ी या सीमेंट के पोल का प्रयोग किया जाता है।

बिना मृदा के खेती (हाइड्रोपोनिक्स)

इस प्रकार की खेती में मृदा का प्रयोग नहीं होता है। इससे पौधों के लिए आवश्यक पोषक तत्वों को जल के सहारे सीधे पौधों की जड़ां तक पहुँचाया जाता है। तकनीक की भाषा में इसे हाइड्रोपॉनिक कहा जाता है।

हाइड्रोपोनिक्स लेटिन शब्द की उत्पत्ति दो शब्दों हाइड्रो तथा पोनोस से हुई है। जिसमें हाइड्रो का अर्थ है पानी और पोनोस का अर्थ है कार्य। बिना मिट्टी के पौधों को एक चनियत माध्यम में जहाँ प्रकाश, तापमान और पोषक तत्व नियंत्रित मात्रा हों, में उगाने के विज्ञान को हाइड्रोपोनिक

कहते हैं। हाइड्रोपोनिक्स एक ऐसी तकनीक है, जिसमें फसलों को बिना खेत में लगाए केवल पानी और पोषक तत्वों से उगाया जाता है। मिट्टी में पौधों की वृद्धि के लिए जो प्राकृतिक तत्व आवश्यक होते हैं, उन्हीं पोषक तत्वों का उपयोग हाइड्रोपोनिक्स में भी किया जाता है। इसमें यह लाभ है कि पौधों का विकास खरपतवार या मृदा जनित कीट और रोगों के द्वारा बाधित नहीं होता है। किसान इसे तकनीक से खीरा, टमाटर, पालक, गोभी, शिमला मिर्च जैसी सब्जियाँ उगा सकते हैं। इसके अतिरिक्त चारे चाली फसलों को नियंत्रित वातावरण में 15 से 20 डिग्री सेल्सियस ताप पर लगभग 80 से 85 प्रतिशत आर्द्रता में उगाया जा सकता है। इस तकनीक को अपनाने हेतु स्वच्छ जल का स्रोत, सही स्थान, तैयार उर्वरक, प्रणाली के लिए दैनिक ध्यान देने का समय, बागवानी का ज्ञान होना अनिवार्य है।

हाइड्रोपोनिक्स विधि की विशेषताएं

स्वच्छ एवं पर्यावरण युक्त खेती। बहुत ही कम सिंचाई जल की अवश्यकता जल और जल में घुले पोषक तत्वों का पुनर्चक्रण से लगातार उपयोग। थोड़ी मेहनत से ज्यादा लाभ। फसल की लागत में कमी। खरपतवारों से रोकथाम से निराई–गुड़ाई के श्रम से मुक्ति। फसल के अनुकूल वातावरण न हो वहाँ पर भी इस विधि से फसल ली जा सकती है।

बिना मृदा के पौधों को कैसे उगाएं

इसके लिए लोहे के मजबूत एंगल से 'वी' शेप का एक ढांचा तैयार किया जाता है जो डेढ़ फीट जमीन में गढ़ा हुआ और जमीन से छह फुट ऊँचा रहता है। इस 'वी' शेप वाले ढांचे के दोनों ओर छह–छह मीटर लंबाई एवं 10 सें.मी. व्यास वाले तीन–तीन पीवीसी पाइप आमने–सामने लगाए जाते हैं। इन पाइपों पर तीस सें.मी. के अंतराल पर साढ़े सात सें.मी. व्यास के छेद किए जाते हैं। इन पाइपों के बंद सिरे की ओर कम से कम 100 लीटर क्षमता की पानी की टंकी जमीन में रखी जाती है। जिससे पौधों के लिए पाइपों में जलापूर्ति की जाती है। इन मोटे पाइपों के निचले सिरों पर कीप को पतले पाइपों से जोड़ा जाता है जो अतिरिक्त जल को पुनः पानी की टंकी में पहुँचा देता है।

ध्यान रखने योग्य बातें: इस सिस्टम को संचालित करने के लिए बिजली आवश्यक है। विद्युत आपूर्ति अवरूद्ध होने पर पौधों की जड़ें सूखने का डर रहता है।

हाइड्रोपोनिक्स के लाभ

हाइड्रोपोनिक्स सिस्टम के बेहतर विकास को सुनिश्चित करता है, साथ ही मिट्टी आधारित बागवानी की तुलना में 95 प्रतिशत कम पानी का उपयोग होता है। इसके द्वारा उच्च गुणवत्ता और उपज के पौधे बड़ी संख्या में उगाये जा सकते हैं। अन्य लाभ इस प्रकार हैं–

1. थोड़ा घना रोपण, उपलब्ध स्थान की अधिक से अधिक उपयोग की अनुमति देता है।
2. उत्पाद बेहतर दिखता है और लम्बे समय तक टिकता है।
3. गर्म पारिस्थितियों में पानी के लिए तनाव कम होता है।
4. जानवरों के द्वारा नुकसान पहुंचने एवं प्राकृतिक आपदाओं जैसे बाढ़, सूखा, अत्यधिक गर्मी या ठंड से होने वाली समस्याओं से मुक्त होता है।
5. गैर कृषि योग्य भूमि वाले क्षेत्रों के लिए उपयुक्त होता है।
6. पौधे बहुत कम समय में परिपक्वता तक पहुँच जाते हैं।
7. मृदा कीट और रोगों में काफी कमी आ जाती है।
8. हाइड्रोपोनिक्स उद्यान को कम रख–रखाव तथा कम मजदूरों की आवश्यकता होती है।

भारत में हाइड्रोपोनिक्स खेती का भविष्य

अभी भी भारत में हाइड्रोपोनिक पौधों को उगाने के अन्य तरीकों की तुलना में कम ही लोकप्रिय है। बढ़ती आबादी,

खेती योग्य जमीन की कमी, जलवायु परिवर्तन, पानी की कमी और पानी की बिगड़ती गुणवत्ता सभी मिलकर किसानों को बागवानी के वैकल्पिक तरीकों की ओर रुख करने के लिए प्रोत्साहित कर रहे हैं। हाइड्रोपोनिक्स प्रौद्योगिकी के द्वारा कुशलतापूर्वक रेगिस्तान, बंजर जमीन, पहाड़ी क्षेत्रों, शहरी छतों और ठोस जमीन पर भी फसल उत्पादन किया जा सकता है। अधिक आबादी वाले क्षेत्रों में वहाँ जमीन की कीमतें आसमान छूने के कारण पंरपरागत कृषि असंभव सी हो गयी है, वहाँ भी स्थानीय स्तर पर हाइड्रोपोनिक्स प्रौद्योगिकी के द्वारा उच्च मूल्य वाली फसलों जैसे ताजा हरा सलाद, जड़ी–बूटियों और कटे तथा गुलदस्ता वाले फूलों को उगाया जा सकता है। यह तकनीक विभिन्न प्रकार के पौधों को उगाने के लिए आदर्श स्थिति उपलब्ध कराती है। विशेष प्रकार के पौधे जैसे टमाटर, खीरे, बैंगनी, ब्रोकोली, भिंडी, काली और सफेद मिर्च, पत्तेदार सब्जियाँ तथा मौसमी फूल इत्यादि, पर अधिकतम लाभ के लिए फसलों का चुनाव समय और बाजार को ध्यान में रखकर करना चाहिए।

एरोपॉनिक (Aeroponics)

इस विधि को केंद्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला ने आलू का बीज उत्पादन करने के किया था। इस विधि में टिश्यू कल्चर (ऊतक संवर्धन) से प्राप्त पौधे को खेत में

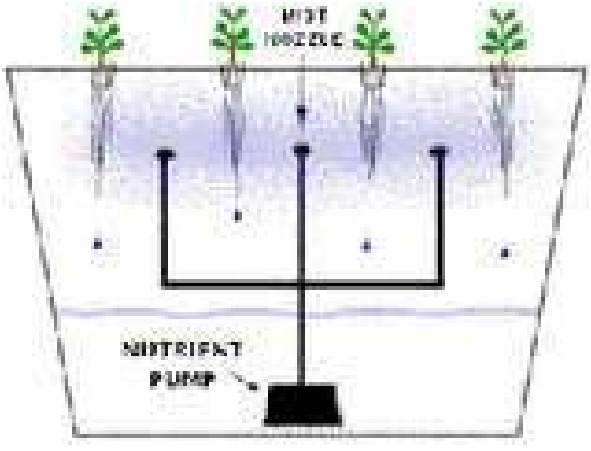

मिट्टी रहित सिस्टम में लगाया जाता है। इस सिस्टम में पौधों की जड़ें अंधेरे डिब्बों में हवा में ही लटकती हैं और पौधे डिब्बों के ऊपर सीधी सूर्य की रोशनी में फलते–फूलते हैं। विशेष प्रकार की नोजलों से पौधों की जड़ां के ऊपर एक निश्चित अन्तराल के बाद सभी आवश्यक तत्वों से युक्त घोल की महीन फुहार होती रहती है। यह घोल एक टंकी में से लिया जाता है और जड़ां के ऊपर स्प्रे होकर बाद में विभिन्न नालियों में से होता हुआ वापिस उसी टंकी में चला जाता है। यह प्रक्रिया दिन–रात लगातार चलती रहती है जब तक फसल की आखिरी कटाई नहीं हो जाती है।

एरोपॉनिक तकनीक से आलू का बीज उत्पादन

एरोपोनिक एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके माध्यम से बिना मिट्टी व संचय माध्यम के वायु कुहांसे के वातावरण में पौधे पैदा किए जाते हैं। इस प्रक्रिया में पौधे की जड़ें प्रकाश रहित सम्पूर्ण अंधकार में सील्ड बक्से या कनस्तर में बढ़ती हैं और यहाँ जड़ां को पोषक तत्व कुहांसे के रूप में प्राप्त होते हैं। इस प्रणाली में पोषक घोल प्रयोग किया जाता है। पौधे का ऊपरी भाग खुली हवा व प्रकाश में रहता है।

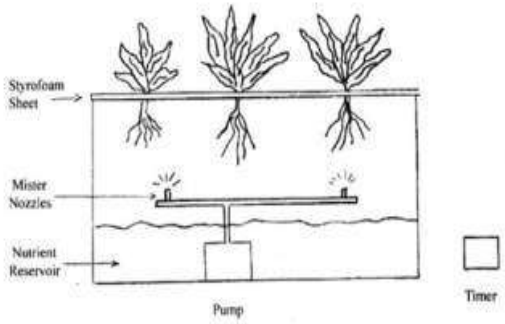

एरोपॉनिक सिस्टम की रचना

एरोपोनिक सिस्टम को हमेशा ग्रीनहाउस या 40 मैश के नेट हाउस में स्थापित किया जाता है। ऐसा करने से आलू के पौधे सफेद मक्खी, चेंपा एवं अन्य कीड़ों से सुरक्षित रहते हैं तथा विभिन्न प्रकार के रोगों से बचाव होता है। इस विधि में मुख्य यंत्र एवं हिस्से निम्न प्रकार हैं–

पोषक घोल टंकी: इस विधि में फसलों के लिए अनिवार्य सभी तत्वयुक्त पानी का घोल बनाकर एक टंकी में डाला जाता है। यह टंकी प्लास्टिक, कंकरीट अथवा किसी भी ऐसी सामग्री से बनाई जाती है जिस पर विभिन्न रसायनों का कोई असर न हो। इस टंकी का आकार कुल पौधों की

संख्या पर निर्भर करता है। पोषक घोल को ठंडा–गर्म करने का प्रावधान भी होना आवश्यक है।

पम्पः विभिन्न प्रकार के पम्प पोषक घोल को टंकी में से उठाकर नोजलों तक पहुंचाने का काम करते हैं और ये स्व–चालित बिजली उपकरणों से चलाए जाते हैं। घोल की सफाई के लिए 100 मैष का फिल्टर लगाना भी अति आवश्यक है, जिससे नोजलों के सुराख बंद नहीं होते। पंप का चुनाव नोजलों के डिजाइन एवं गिनती को ध्यान में रखकर किया जाता है।

नोजलः एरोपॉनिक सिस्टम में नोजलें सबसे महत्वपूर्ण पुर्जा हैं। उच्च दबाव से नोजलों द्वारा तत्वयुक्त पानी की पौधों की जड़ां के ऊपर महीन धुंधनुमा फुहार की जाती है, जिससे पौधे को खुराक लगातार मिलती रहती है।

ग्रो बॉक्सः ये बक्से इस तरह से बनाए जाते हैं कि इनकी छत में टिश्यु कल्चर से लिए गए पौधों की बुवाई की जाती है और नोजलें इन्हीं बक्सों के अंदर लगाई जाती हैं। इनके अंदर पूर्णतः अंधेरा होने के कारण अंदर जड़ें और आलू बनते हैं और ऊपरी भाग में सूर्य की रोशनी में पौधे बढ़ते हैं। ग्रो बॉक्स को सिर्फ आलू की तुड़ाई या निरीक्षण के समय ही खोला जाता है।

बिजली उपकरणः विभिन्न बिजली उपकरणों से पूरे एरोपोनिक सिस्टम एवं ग्रीन हाउस को स्व–चालित बनाया जाता है ताकि यह अपने आप दिन–रात चलता रहे।

एरोपॉनिक के लाभ

1. इस विधि में फसलें बिना मिट्टी के उगाई जाती है, इस लिए फसल मिट्टी से होने वाले रोगों से बची रहती है और उच्च गुणवत्ता का बीज पैदा किया जा सकता है।
2. टिश्यु कल्चर से लिया पौधा मिट्टी के मुकाबले संख्या में 5 से 7 गुना अधिक आलू बीज पैदा करता है और आकार भी लगभग एक जैसा ही होता है।
3. पानी की खपत मिट्टी की तुलना में सिर्फ 5 से 10 प्रतिशत और पोषक तत्वों की 20 से 25 प्रतिशत ही होती है।
4. इस विधि से बीजोंत्पादन उन क्षेत्रों में भी किया जा सकता है जहाँ पर जुताई योग्य जमीन उपलब्ध नहीं है और पानी की उपलब्धता भी बहुत कम है।
5. इस विधि से साल में दो फसलें पैदा की जा सकती हैं।
6. बीज का आकार छोटा होने के कारण परिवहन में बहुत कम खर्च आता है।
7. प्रति कन्द उत्पादन लागत अन्य विधियों की तुलना में अपेक्षाकृत 5 से 6 गुना कम आती है।

आज आवश्यकता इस बात की है कि भारतीय कृषि को एक प्रौद्योगिकी के रूप में विकसित किया जाए और इसके लिए अभिनव कृषि तकनीकों को अपनाया जाए। यह कृषि की एक आधुनिक नवीन अवधारणा है कि भारतीय कृषि में नव प्रयोगों की शुरूआत की जाए।

सतत पोषण सुरक्षा के लिए सहजन की खेती

एल मुरलीकृष्णा, एन वी कुंभारे एवं वाई पी सिंह
भा.कृ.अ.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली –110012

सहजन (*मोरिंगा ओलीफेरा*) जिसे आमतौर पर मोरिंगा (ड्रमस्टिक) कहा जाता है, एक तेजी से बढ़ने वाला पर्णपाती पेड़ है। यह पेड़ भारत के मुख्य रूप से उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में उगाया जाता है, जहां पोषण सम्बन्धी असुरक्षा सबसे बड़ा मुद्दा है। सहजन में लगभग हर हिस्सा अर्थात फूल, फल, बीज, गोंद, छाल और जड़ में पोटैशियम, कैल्शियम, फॉस्फोरस, लोहा, फोलिक एसिड और साथ ही साथ एस्बेटाकैरोटीन सहित प्रोटीन, विटामिन और खनिजों का एक समृद्ध भंडार होता है।

वर्तमान समाज जंक फूड और पशु वसा की ओर बढ़ रहा है, जो खराब पोषण का कारण बन रहा है। इसलिए, भारत और विकासशील देशों के लिए खाद्य और पोषण सुरक्षा सुनिश्चित करना एक बड़ी चुनौती है। पोषण सुरक्षा को सुरक्षित करने के लिए स्थानीय रूप से उपलब्ध और आसानी से सस्ती समृद्ध टिकाऊ खाद्य खपत स्वरूप को बढ़ाना कुपोषण को दूर करने और पोषण सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए दीर्घकालिक समाधान प्रदान करता है। मोरिंगा आसानी से कुपोषण और कई स्वास्थ्य सम्बन्धी बीमारियों का प्रभावी ढंग से इलाज करती है।

मानव पोषण में महत्व

पोषण सुरक्षा प्रत्येक व्यक्ति के लिए संतुलित आहार, स्वच्छ पेयजल, स्वास्थ्य देखभाल और सुरक्षित वातावरण आर्थिक और सामाजिक पहुंच को इंगित करता है। भारत और विकासशील देश के अधिकांश लोगों ने खाद्य सुरक्षा हासिल की लेकिन पोषण सम्बन्धी जागरूकता खराब पोषण, आहार की असन्तुलित उपयोग, व्यवहार सम्बन्धी मुद्दों, अवसंरचनात्मक मुद्दों, स्वास्थ्य सम्बन्धी मुद्दों और सामाजिक पूर्वाग्रह की वजह से उपेक्षित है। दुर्भाग्यवश, भारतीय आहार में विटामिन, खनिज और प्रोटीन जैसे गुणात्मक रूप से अधिक कमी होती है, क्योंकि सब्जियों, फलों, दालों और जानवरों की उत्पत्ति वाले खाद्य पदार्थों के कम सेवन से वाणिज्यिक कृषि ने अपने नियमित आहार में पौष्टिक आहर की खपत को कम कर दिया। यह देश के विकास और स्वास्थ्य देखभाल व्यय पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है।

भारत के उत्तरी राज्यों बिहार, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, राजस्थान और उड़ीसा की तुलना में केरल और तमिलनाडु के बेहतर पोषण सुरक्षा मापदंड हैं। परंपरागत रूप से, पोषण युक्त आहार आधारित खाद्य स्वरूप, बेहतर क्रय शक्ति और बेहतर आहार, स्वास्थ्य और स्वच्छता ,कम सामाजिक पूर्वाग्रह के बारे में जागरूकता और शिक्षा के कारण है। इसलिए यह भारत में और अन्य विकासशील देशों में पोषण समृद्ध खाद्य उत्पादन और खपत में सुधार करने के लिए उचित समय है । स्थानीय रूप से उपलब्ध फलों और सब्जियों से भरपूर सभी पोषणों में मोरिंगा (*मोरिंगा ओलीफेरा*) जिसे आमतौर पर ड्रमस्टिक कहा जाता है में उपलब्ध पोषण का बहुत बड़ा स्रोत होता है। यह पोटैशियम, कैल्शियम, फॉस्फोरस, लोहा, फोलिक एसिड और साथ ही एस्बेस्टाकैरोटीन सहित प्रोटीन, विटामिन और खनिजों का एक समृद्ध भंडार है। इसलिए, पोषाहार की खेती और पोषण सम्बन्धी असुरक्षा क्षेत्रों में मोरिंगा आधारित खाद्य खपत को बढ़ावा देना कुपोषण से संबंधित मुद्दों को आसानी से कम कर सकता है और पोषण सुरक्षा सुनिश्चित कर सकता है।

सहजन का महत्व

सहजन एक तेजी से विकसित होने वाले परिवार का सूखा–प्रतिरोधी पेड़ है Moringaceae Moringa एक तमिल शब्द मुरुगई से निकला है, जिसका अर्थ है ''मुड़ फली'' जो युवा फल के लिए उपयुक्त है। प्रजाति का नाम लैटिन के शब्द ओलियम ''तेल'' और फेर्रे से ''सहन'' से लिया गया है। सहजन के बीज की फली को सब्जियों के रूप में इस्तेमाल करते हैं। इसका उपयोग जल शोधन के लिए भी किया जाता है।

सहजन खेती की प्रक्रिया

सहजन (मोरिंगा) का पेड़ मुख्य रूप से उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में उगाया जाता है। यह मिट्टी की एक विस्तृत श्रृंखला को सहन करता है, लेकिन थोड़ा तटस्थ अम्लीय (पीएच 6.3 से 7.0), अच्छी तरह से सूखा रेतीली या दोमट मिट्टी इसके लिये उप्युक्त है। मोरिंगा शुष्क क्षेत्रों के लिए विशेष रूप से उपयुक्त है, क्योंकि यह महंगी सिंचाई तकनीकों के बिना वर्षा जल का उपयोग करके उगाया जा सकता है।

मिट्टी की तैयारी

उष्णकटिबंधीय और उप–उष्णकटिबंधीय स्थिति में, खेत की जुताई यथासंभव उथली होनी चाहिए। जुताई केवल उच्च रोपण घनत्व के लिए आवश्यक है। कम रोपण घनत्वों में गड्ढों को खोदना और उन्हें मिट्टी और फार्म यार्ड खाद के साथ फिर से भरना बेहतर होता है। यह बहुत अधिक भूमि कटाव पैदा किए बिना अच्छी जड़ प्रणाली सुनिश्चित करता है। गड्ढे 30 से 50 सेमी. गहरे और 20 से 40 सेमी चौड़े होने चाहिए।

प्रचार / फैलाव

सहजन को बीज या मोरिंगा कटिंग से प्रचारित किया जा सकता है। प्रत्यक्ष सीडिंग संभव है क्योंकि मोरिंगा ओलीफेरा की अंकुरण दर अधिक है। कई किस्में जो कि पीकेएम 1, पीकेएम 2 इत्यादि में अच्छी उपज देती हैं, मोरिंगा के बीज अच्छी तरह से बहने वाली मिट्टी में वर्ष भर अंकुरित हो सकते हैं। वानस्पतिक प्रसार के लिए 1 मीटर लंबाई और कम से कम 4 सेमी व्यास के कटिंग का उपयोग किया जा सकता है।

रोपण

गहन पत्ती उत्पादन के लिए, ''पौधों का अंतर 15 X 15 सेमी या 20 X 10 सेमी होना चाहिए। सहजन में एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन अधिक उपज और गुणवत्ता वाले उत्पाद प्राप्त करने के लिए उपयोगी होगा। सहजन के पेड़ की खेती गली–मोहल्लों में भी की जा सकती है, क्योंकि प्राकृतिक बाड़ और अन्य फसलों से जुड़े हैं। मोरिंगा में पंक्तियों के बीच की दूरी आमतौर पर 2 से 4 मीटर के बीच होती है। एकीकृत खरपतवार प्रबंधन के लिए दीर्घकालिक दृष्टिकोण से खरपतवार की मात्रा कम होनी चाहिए और मिट्टी में खरपतवार के बीज का भंडार कम होना चाहिए। यह विचार करना चाहिए कि भूमि के वांछनीय गुणों, जैसे कि इसकी मूल पारिस्थितिकी या कृषि फसलों को नष्ट किए बिना इस लक्ष्य को कैसे प्राप्त किया जाए।

सिंचाई

बुवाई से पहले और बुवाई के 3 दिन बाद में मिट्टी के प्रकार के अनुसार 10 – 15 दिन के अंतराल पर सिंचाई करें।

कीट और रोग प्रबंधन

सहजन का पेड़ अपने मूल या शुरू की गई श्रेणियों में किसी गंभीर बीमारी से प्रभावित नहीं होता है। भारत में कई कीटों को देखा जाता है, जिसमें लीफ कैटरपिलर (नोरडॉब्लिटैलिस), मोरिंगाबुड वर्म (नूर्डामोरेसिंग) शामिल हैं। हेयरिंग कैटरपिलर (यूपोटोटेमोलिफेरा) और पॉड फ्लाई (जीटोनाडिस्टिग्मा), एफिड्स, स्टेम बोरर्स और फलों की मक्खियों के हानिकारक एजेंट्स भी मोरिंगा को प्रभावित करते हैं। कुछ क्षेत्रों में दीमक से मामूली नुकसान भी हो सकता है। सहजन का पेड़ लेविलुलातुरिका कीट के लिए एक मेजबान है।

उपज और फसल

सहजन फल देने के मामले में मौसमी होते हैं और सितंबर के दौरान बोई जाने वाली फसल छह महीने के भीतर कटाई के लिए आ जाती है। फाइबर विकसित करने से पहले पर्याप्त लंबाई और परिधि वाले फलों को काटा जाता है। कटाई की अवधि 2–3 महीने तक होती है और प्रत्येक पेड़ से 250–400 फल प्रति वर्ष प्रति वृक्ष प्राप्त होता है। सहजन को प्रति हेक्टेयर 650 मीट्रिक टन हरे पदार्थ की पैदावार के साथ तीव्रता से उगाया जा सकता है।

भारत में एक हेक्टेयर से 31 टन तक फली का उत्पादन प्राप्त प्राप्त किया गया है। उत्तर भारतीय परिस्थितियों में फल गर्मियों के दौरान पकते हैं। कभी–कभी विशेष रूप से दक्षिण भारत में, फूल और फल वर्ष में दो बार दिखाई देते हैं, इसलिए दो फसलें होती हैं, जुलाई से सितंबर और मार्च से अप्रैल तक।

पत्ते

ताजा मामले में 6 टन/हेक्टेयर/वर्ष की औसत पैदावार प्राप्त की जा सकती है। पत्तियों और तनों को बीजोंरोपण के 60 दिन बाद और फिर वर्ष में सात बार युवा पौधों से तोड़ा जा सकता है। कुछ उत्पादन प्रणालियों में पत्तियों को हर दो सप्ताह में तोड़ा जाता है।

सहजन के पोषण और स्वास्थ्य लाभः

- सहजन के पौधे में अद्वितीय पोषण गुण होते हैं जो दुनिया भर में लाखों गरीब समुदायों के लिए पौष्टिक आहार हैं, जिन्हें प्रोटीन, खनिज और विटामिन जैसे आहार पूरक की आवश्यकता होती है।
- सहजन साग (पत्तियां) प्रोटीन का एक उत्कृष्ट स्रोत है जो पूरे संसार में किसी भी जड़ी–बूटियों और पत्तेदार साग के लिए एक अनूठी विशेषता है। ताजी कच्ची पत्तियों का 100 ग्राम से 9.8 ग्राम प्रोटीन या दैनिक आवश्यकता का लगभग 17.5% होता है। सूखे पत्ते के पाउडर वास्तव में कई गुणवत्ता वाले अमीनो एसिड का एक उत्कृष्ट स्रोत हैं।
- ताजा फली और बीज ओलिक एसिड का एक उत्कृष्ट स्रोत हैं, यह एक स्वास्थ्य लाभकारी मोनोअनसैचुरेटेड वसा है।
- ताजा पत्ते और मोरिंगा विटामिन ए के सबसे समृद्ध स्रोत हैं। ताजा पत्तियों के 100 ग्राम 7564 IU या 252% दैनिक आवश्यक विटामिन–ए का स्तर ले जाते हैं, जो वसा में घुलनशील एंटी–ऑक्सीडेंट में से एक है। म्यूकोसल मरम्मत, त्वचा की रखरखाव, दृष्टि और प्रतिरक्षा सहित कई लाभ होते हैं।
- ताजा सहजन (ड्रमस्टिक) फली और पत्तियां विटामिन–सी का एक उत्कृष्ट स्रोत हैं। शोध अध्ययनों से पता चला है कि विटामिन सी से भरपूर फलों / सब्जियों के सेवन से शरीर को संक्रामक एजेंटों से लड़ने के लिए प्रतिरक्षा विकसित करने में मदद मिलती है।
- सहजन के पत्ते, साथ ही फली भी, कई महत्वपूर्ण बी–कॉम्प्लेक्स विटामिन की अच्छी मात्रा में होते हैं जैसे कि फोलेट्स, विटामिन–बी 6 (पाइरिडोक्सिन), थियामिन (विटामिन बी –1), राइबोफ्लेविन, पैंटोफेनीक एसिड और नियासिन। इनमें से अधिकांश विटामिन कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन और वसा चयापचय में सह–एंजाइम के रूप में कार्य करते हैं।
- इसके अलावा, इसका साग (पत्तियां) कैल्शियम, लोहा, तांबा, मैंगनीज, जस्ता, सेलेनियम और मैग्नीशियम जैसे खनिजों के बेहतरीन स्रोतों में से एक है। आयरन एनीमिया को कम करता है। हड्डी के खनिज के लिए कैल्शियम आवश्यक है। जिंक बाल विकास, शुक्राणुजनन, और त्वचा के स्वास्थ्य में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

तालिका 1: सहजन (ड्रमस्टिक के पत्ते और फली) 'पोषक तत्व डेटा'

अ. क्र.	पोषक तत्वों की प्रक्रिया	इकाई	प्रति 100 ग्राम पत्तियों का मूल्य	मूल्य प्रति 100 ग्राम फली
1.	पानी	ग्राम	78.66	88.20
2.	ऊर्जा	किलो कैलोरी	64	37
3.	प्रोटीन	ग्राम	9.4	2.10 ह
4.	कुल लिपिड (वसा)	ग्राम	1.4	0.20 ह
5.	कार्बोहाइड्रेट	ग्राम	8.28	8.53
6.	फाइबर, कुल आहार	ग्राम	2	3.2
	खनिज पदार्थ			
7.	कैल्शियम	मि.ग्रा.	185	30
8.	लोहा	मि.ग्रा.	4	0.36
9.	मैग्नीशियम	मि.ग्रा.	42	45
10.	फास्फोरस	मि.ग्रा.	112	50

11.	पोटेशियम	मि.ग्रा.	337	461
12.	सोडियम	मि.ग्रा.	9	42
13.	जिंक	मि.ग्रा.	0.6	0.45
	विटामिन			
14.	विटामिन सी	मि.ग्रा.	51.7	141.0 मि.ग्रा.
15.	थायमिन	मि.ग्रा.	0.257	0.0530 मि.ग्रा.
16.	राइबोफ्लेविन	मि.ग्रा.	0.66	0.074
17.	नियासिन	मि.ग्रा.	2.22	0.620
18.	विटामिन बी 5	मि.ग्रा.	–	0.794
19.	विटामिन बी –6	मि.ग्रा.	1.2	0.120
20.	विटामिन बी –9	माइक्रोग्राम	–	44 माइक्रोग्राम
21.	फोलेट	माइक्रोग्राम	40	–
22.	विटामिन बी 12	माइक्रोग्राम	0	–
23.	विटामिन ए, आरएई	माइक्रोग्राम	378	–
24.	विटामिन ए, आईयू	माइक्रोग्राम	7564	4

स्रोतः यूएसडीए पोषक डेटाबेस

छोटे किसानों के लिए सहजन की खेती के फायदे

- सहजन का वृक्ष एक तेजी से बढ़ने वाला, सूखा–प्रतिरोधी और मुख्य रूप से अर्ध–उष्णकटिबंधीय, उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में उगाया जा सकता है।
- सहजन को न्यूनतम सिंचाई सुविधाओं की आवश्यकता होती है, इसके लिए अधिक श्रम की आवश्यकता नहीं होती है और परिवार के सदस्य मोरिंगा की खेती की प्रक्रिया में विभिन्न कार्यों का प्रबंधन आसानी से कर सकते हैं। इसके लिए कम मात्रा में खाद और उर्वरकों की आवश्यकता होती है। छोटे किसान अपनी उपज को स्थानीय बाजारों में आसानी से पहुंचा सकते हैं, छंटाई की गई सामग्रियों को लुगदी और कागज उद्योगों द्वारा प्रभावी रूप से पुर्ननवीनीकरण किया जा सकता है, जो छोटे किसानों के लिए एक अतिरिक्त लाभ है।

स्थानीय रूप से उपलब्ध फलों और सब्जियों से भरपूर सभी पोषणों में, सहजन (मोरिंगा ओलीफेरा) जिसे आमतौर पर सहजन (ड्रमस्टिक) कहा जाता है, में उपलब्ध पोषण का बहुत बड़ा स्रोत होता है। ड्रमस्टिक की नन्ही पत्तियों में जिसमें 7 गुना विटामिन सी, 4 गुना विटामिन ए, गाजर का 4 गुना, दूध का कैल्शियम का 4 गुना, केले का पोटेशियम का 3 गुना, प्रोटीन का 2 गुना प्रोटीन और सभी आवश्यक अमीनो एसिड होता है।

यह प्रोटीन, विटामिन और खनिजों का एक समृद्ध भंडार है, जिसमें पोटेशियम, कैल्शियम, फॉस्फोरस, लोहा, फोलिक एसिड और साथ ही साथ कैरोटीन भी शामिल है। इसलिए तेजी से फैलने की दिशा में नीतियों और विस्तार हस्तक्षेपों को बढ़ावा देना और सहजन की खेती को अपनाना और पोषण सम्बन्धी असुरक्षा क्षेत्रों में मोरिंगा आधारित खाद्य खपत को बढ़ावा देना, कुपोषण से संबंधित विषयों को आसानी से संबोधित कर सकता है और भारत और विकासशील दुनिया में स्थायी पोषण सुरक्षा सुनिश्चित कर सकता है।

किसानों हेतु सब्जियों की संरक्षित खेती : एक लाभकारी तकनीक

अवनि कुमार सिंह
संरक्षित कृषि प्रौद्यौगिकी केन्द्र,
भा.कृ.अ.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान (पूसा), नई दिल्ली–110012

क्या है संरक्षित खेती ?

संरक्षित खेती एक नवीनतम तकनीक है। जिसके माध्यम से फसलों की मांग के अनुसार सूक्ष्म वातावरण को नियन्त्रित करते हुए मूल्यवान सब्जियों की खेती को प्राकृतिक प्रकोपों एवं अन्य समस्याओं से बचाव करती है और कम से कम क्षेत्रफल में अधिक से अधिक गुणवत्ता युक्त उत्पादन देती है, अर्थात वह खेती जो हर परिस्थितियों उगाई गई फसलों को विविध आपदाओं से सुरक्षित रखती हो तो उसको संरक्षित खेती कहते हैं।

संरक्षित खेती की आवश्यकता क्यों ?

चूँकी संरक्षित खेती अपनाने के विभिन्न लाभ है और इन्हीं लाभों के कारण देश के किसानों को संरक्षित खेती करने की आवश्यकता है जैसे.....

- पूरे वर्ष आवश्यकतानुसार रोग रहित गुणवत्तायुक्त एवं सुरक्षित पौधों को कम समय में कई बार उगाया जा सकता है।
- विविध प्राकृतिक आपदाओं जैसे तापक्रम के उतार–चढ़ाव, धूप– छाँव, ठण्डी हवाओं, बारिश, ओला, पाला, बर्फबारी, लू, आदि कारकों से फसलों की सम्पूर्ण रूप से सुरक्षा करती है।
- कीटों–पतंगों, जंगली जानवरों आदि से फसलों की सुरक्षा करती है।
- प्रति इकाई क्षेत्र उत्पादन एवं उत्पादकता दोनों को बढ़ावा देती है।
- मौसम, बेमौसम, अगेती एवं बाजार मांग के अनुसार सब्जियों का उत्पादन किया जा सकता है।
- कम जोत अर्थात छोटे किसानों हेतु बहुत उपयोगी तकनीक है जिसके माध्यम से रोजगार को बढ़ावा दिया जा सकता है।
- वर्तमान परिस्थितियों में परिनगरीय एवं शहरी क्षेत्रों के लघु एवं सीमान्त किसानों हेतु रोजगारपरण तकनीक साबित हो रही है।

संरक्षित खेती के अंतर्गत आने वाली विभिन्न संरचनाएं एवं उपयुक्त सब्जियां

संरक्षित खेती के अंतर्गत आने वाली विभिन्न संरचनाओं को अलग–अलग नामों से वैज्ञानिक खोज की गई है जिसको नीचे सारणी में दर्शाया गया है और इन्हीं संरचानाओं को हम संरक्षित खेती के नाम से जानते हैं

क सं	**संरचना के नाम**	**उगाई जाने वाली सब्जियाँ**
1.	फैन–पैड पॉलीहाउस	नर्सरी, टमाटर, खीरा, शिमला मिर्च
2.	प्राकृतिक वातायन पॉलीहाउस	नर्सरी, टमाटर, खीरा, शिमला मिर्च
3.	कीट अवरोधी नेट हाउस	नर्सरी, टमाटर, खीरा, शिमला मिर्च
4.	छायादार नेट हाउस	केवल नर्सरी एवं पत्तीदार सब्जियां
5.	प्लास्टिक टनल	अगेती चप्पन कद्दू, लौकी, तोरी आदि
6.	प्लास्टिक मल्च	समस्त टमाटरवर्गीय एवं कद्दूवर्गीय सब्जियाँ

संरक्षित खेती के संरचनाओं को बनाने हेतु उपयुक्त सामग्रियां एवं उनकी गुणवत्ता

सामान्यतः यह देखा गया है कि संरक्षित खेती की संरचनाओं को बनाने में अधिकांशतः प्लास्टिक एवं लोहे

की सामग्रियों का उपयोग किया जाता है जिनको संरचना के अनुसार अलग–अलग नामों से जाना जाता है। जैसे –

- पालीहाउस संरचना को ढकने हेतु सभी प्लास्टिक सामग्रियां पराबैंगनी किरणों से प्रतिरोधी हो, छत वाली पालीथीन 200 माईक्रोन मोटी, पारदर्शी एवं लचीली हो।
- संरचनाओं में लगने वाली कीटरोधी जाली सफेद रंगों वाली पराबैंगनी किरणों से प्रतिरोधी, नाईलॉन की हो और प्रति वर्ग इंच इसमें छिद्रों की संख्या 40–50 तक होनी चाहिए।
- संरचनाओं पर लगने वाली छायादार जाली हरे या काले रंगों वाली हो, पराबैंगनी किरणों से प्रतिरोधी नाईलॉन की हो और 50 प्रतिशत तक छाया अवरोधी क्षमता रखती हो।
- लो–टनल संरचना पर लगने वाली पालीथीन पारदर्शी, पराबैगनी किरणों से प्रतिरोधी, 25–30 माईक्रान मोटी, लचीली तथा 2–3 मीटर तक चौड़ाई वाली होनी चाहिए।
- वाकिंग टनल पर लगने वाली पालीथीन 100 माईक्रान मोटी, पारदर्शी, पराबैंगनी किरणों से प्रतिरोधी एवं लचीली होनी चाहिए।
- मल्च के रूप में उपयोग की जाने वाली पॉलीथीन काली, पीली, लाल, चांदनी आदि रंगों वाली पराबैंगनी किरणों से प्रतिरोधी, 30–50 माईक्रान मोटी, लचीली एवं 3–4 फुट चौड़ी होनी चाहिए।
- सभी संरचनाओं के अन्दर टपक सिंचाई की आवश्यकता होती है।
- संरचनाओं को बनाने हेतु जी.आई. पाइपों, एंगल आयरन, बांस–बल्ली, जी.आई तार के साथ–साथ सीमेंट, बालू एवं कंकरीट की आवश्यकता पड़ती है।

संरक्षित खेती हेतु मिलने वाली सरकारी छूट

कृषि मंत्रालय भारत सरकार द्वारा चलाए जा रहे विभिन्न उपक्रमों के अंतर्गत संरक्षित खेती के सभी संरचनाओं पर लगभग 50 प्रतिशत तक की सरकारी छूट हर प्रदेश में दी जा रही है। इसके साथ–साथ किसी–किसी प्रदेश द्वारा 25 से 30 प्रतिशत की अतिरिक्त सरकारी छूट भी दी जा रही है, जिसको मिलाकर वर्तमान में 75 से 80 प्रतिशत तक की छूट किसानों को मिल रही है, जिसके कारण किसान भाईयों को अधिक आर्थिक सहूलियत एवं राहत मिल रही है। सरकारी छूट की सम्पूर्ण जानकारी हेतु प्रत्येक प्रदेश के निदेशक, उद्यान एवं जिला उद्यान अधिकारी से संपर्क करके ली जा सकती है।

संरक्षित खेती के संरचनाओं का वर्णन

पालीहाउस खेती :–

पालीहाउस एक घर नुमा संरचना होती है जिसको जी.आई. पाइपों एवं पालीथीन के सहयोग से बनाया जाता है। इसके अंदर कृषि यंत्रों का उपयोग आसानी से करके शिमला मिर्च, टमाटर, चेरी टमाटर, खीरा एवं चप्पन कद्दू की खेती की जा सकती है। हमारे देश में समान्यतः पालीहाउसों को दो प्रकार से बनाया जाता है। जिसमें जहां बिजली की उपलब्धता आसानी से हो और सस्ती दरों पर उपलब्ध हों तो वहां बिजली चालित फैन–पैड पालीहाउसों का निर्माण करते हैं। लेकिन यदि दुर्गम क्षेत्र है और बिजली की उपलब्धता आसानी से नहीं है तो ऐसे क्षेत्रों में प्राकृतिक संवाहित (नैचुरली वैंटीलेटेड) पालीहाउस का निर्माण करते हैं। इन पालीहाउसों का क्षेत्रफल कम से कम 500 से 1000 वर्गमीटर रखना आवश्यक होता है। जिससे खेती करने के उपरांत व्यवसायिक रूप से लाभदायक सिद्ध होता है। इन पालीहाउसों में सिंचाई हेतु टपक सिंचाई तकनीक का उपयोग करना आवश्यक होता है जिसके माध्यम से सिंचाई के साथ–साथ उर्वरक एवं दवाओं को भी दिया जा सकता है। पालीहाउस के अंदर लगने वाली मूल्यवान सब्जियों के नाम, उनकी प्रजातियां, रोपण अवधि, उनकी उत्पादन क्षमता एवं लागत–लाभ प्रति 1000 वर्गमीटर में प्रति वर्ष की दर से नीचे सारणी में दर्शाया गया हैः

पालीहाउस क्षेत्रफल 1000 वर्गमीटर –प्रति वर्ष की दर से						
क्र.सं.	सब्जीयों के नाम	प्रजातियों के नाम	फसलचक्र	उत्पादन (कुंतल)	कुल लागत (लाख रू. में)	शुंद्ध लाभ (लाख रू. में)
1.	बीजरहित खीरा	सैटिस, कियान, हिलटन	जुलाई–अक्तूबर अक्तूबर–फरवरी फरवरी–मई (तीन फसल)	120–130	2.5–3.0	3–4 (तीनों फसल से)
2.	शिमला मिर्च	स्वर्णा, ओरोवेली, इन्द्रा, नताशा, वाम्बी	अगस्त–मई (एक फसल)	60–70	2.0–2.5	1.50 –2.0
3.	लता टमाटर	जी.एस. 600, रक्षिता, स्नेह लता, नवीन एवं रीतूजा	अगस्त–मई (एक फसल)	140–150	2.0–2.5	1.75 –2.0
4.	नर्सरी पौध	सभी प्रकार की सब्जियों की पौध	6 बार प्रति वर्ष	20–25 लाख पौध	3–4	4–6

वर्तमान में जो पालीहाउस 1000 वर्गमीटर क्षेत्रफल वाले किसानों के खेतों में बनाए जा रहे हैं, उनकी वास्तविक लागत औसतन 10–12 लाख के लगभग पड़ रही है। जिस पर किसानों को 50–75 प्रतिशत तक सरकारी छूट प्राप्त हो सकती है शेष रूपया अपने पास से लगाना होगा। इस तकनीक पर किसानों हेतु बैंक से लोन भी उपलब्ध कराया जा रहा है।

कीट अवरोधी नेट हाउस खेती :

यह संरचना भी पालीहाउस संरचना की भांति होती है। इसमें फर्क सिर्फ इतना होता है कि पालीहाउस को पालीथीन से ढका जाता है और इसको सिर्फ कीट अवरोधी सफेद जाली के द्वारा ढका जाता है। इसमें छतों को इच्छानुसार वर्गाकार, त्रिभुजाकार, आयताकार बनाया जा सकता है। यह संरचना उन क्षेत्रों के लिए उपयोगी साबित होती है जिन क्षेत्रों में कम से कम बारिश, पाला एवं ठंडक, सामान्य से कम पड़ती है और तापमान सदाबहार अर्थात एक सा बना रहता हो। इस खेती का मुख्य उद्देश्य छोटे–छोटे शत्रु कीटों से रक्षा करके फसलों को विषाणु रोग से बचाया जाता है। इस कीट अवरोधी नेट हाउस के अन्दर वर्ष में दो बार खीरे की फसल, एक बार टमाटर और शिमला मिर्च की फसल ली जा सकती है। इसी के साथ–साथ इसेक अन्दर 4 बार सब्जियों की पौध को भी उगा सकते हैं। इसमें सब्जियों का उत्पादन पालीहाउस खेती से 25–30 प्रतिशत तक कम आता है। यदि नेटहाउस संरचना 1000 वर्गमीटर की है तो इसको बनाने की लागत औसतन रू. 5–6 लाख तक आंकी जाती है। इस संरचना को बनवाने पर भी 50 प्रतिशत के लगभग सरकारी अनुदान किसानों को मिल जाता है।

छायादार नेटहाउस खेती:

यह संरचना भी कीटरोधी नेट हाउस की तरह बनाई जाती है और इसके अन्दर हम गर्मियों के मौसम में पत्तीदार सब्जियों को उगाकर अधिक लाभ कमा सकते हैं। क्योंकि पत्तीदार सब्जियां जैसे– पालक, मेथी, मूली, चौलाई, धनियाँ आदि गर्मियों में खुले खेतों में नहीं होती है इसके साथ–साथ गर्मियों में इसे नेट हाउस का उपयोग अगेती गोभी वर्गीय सब्जियों की खरीफ प्याज की व अन्य सब्जियों की नर्सरी उगाने हेतु लाभकारी साबित होती है। इस प्रकार यह नेट हाउस गर्मियों के मौसम में सब्जी उत्पादन में अहम भूमिका निभाता है। इसकी भी लागत 5–6 लाख रूपया प्रति 1000 वर्ग मीटर क्षेत्रफल पर पड़ जाती है। इस संरचना पर भी किसानों को सरकारी छूट लगभग 50 प्रतिशत दी जाती है। छायादार जाली हरे रंगों वाली 50–75 प्रतिशत तक छाया देने वाली गर्मियों की खेती हेतु लाभकारी साबित होती है।

प्लास्टिक लो–टनल खेती:

यह 1–3 माह तक के लिए सब्जियों के उपर बनाई जाने वाली अस्थाई संरचना होती है। चूंकि यह बनने के

बाद देखने में सुरंग की तरह लगती है तो इस संरचना को टनल कहते है। इस लो–टनल संरचना को बनाने हेतु 6–10 मिली मीटर मोटी, 2–3 मीटर लम्बी जी.आई. तार या सरिया या बांस की फट्टियों का उपयोग करके बनाया जाता है। इन तारों को दोनों सिरों पर 1–1.5 मीटर चौड़ी बेड पर गाड़ते हैं तो इसकी ऊंचाई स्वतः 2.5–3.0 फीट की बन जाती है। टनल तारों की आपसी दूरी 2–2 मीटर पर रखते हैं। टनल बनने के बाद इसके ऊपर 25–30 माईक्रान वाली पारदर्शी मोटी पालीथीन से सम्पूर्ण रूप से ढक देते हैं। प्लास्टिक लो टनल मैदानी क्षेत्रों में कद्दू वर्गीय सभी सब्जियों की अगेती खेती को बढ़ावा देने हेतु अधिकांशतः अपनाई जाती है। इसके अन्दर नवम्बर, दिसम्बर एवं जनवरी के महीनों में इन सब्जियों की पौध बनाकर रोपण कर देते हैं और फरवरी माह में खोल देते हैं। खोलने के एक सप्ताह बाद कद्दू वर्गीय सब्जियों से फल प्राप्त होने लगते हैं। प्लास्टिक लो–टनल तकनीक से चप्पन कद्दू नामक सब्जी का उत्पादन सफलतापूर्वक किया जाता है। जबकि सामान्यतौर पर कद्दू वर्गिय सब्जियां का रोपण किसान फरवरी–मार्च में करते है। इस तकनीक से उत्पादन डेढ से दो माह पहले बाजार में आ जाता है और किसानों को अधिक लाभ प्राप्त होता है। प्लास्टिक लो–टनल को बनाने में प्रति 1000 वर्ग मीटर क्षेत्रफल पर 25–30 हजार रूपया की लागत आ जाती है। इस तकनीक को अपनाने पर टपक सिंचाई लगाना आवश्यक होता है। बिना टपक सिंचाई के लो–टनल खेती करना संभव नहीं है। इस लो–टनल तकनीक पर भी सरकारी छूट किसानों को प्राप्त है।

प्लास्टिक हाई–टनल खेतीः

यह प्लास्टिक लो–टनल का बड़ा रूप है और इसके अन्दर हम आसानी से आ जा सकते हैं। इसलिए इसको वाकिंग टनल कहते हैं। यह प्रायः पौने या आधा इंच गोल जी.आई. पाइपों, बासों एवं प्लास्टिक पाईपों के सहयोग से बनाई जाती है। इन पाइपों की लम्बाई बाजार में 20 फीट की होती है। इसको अर्ध चन्द्राकार मोड़कर सरिया के खूटों के मध्य से खेत में लगाया जाता है। इन 20 फीट पाइपों को मोड़ने के बाद उसकी ऊंचाई 6 फीट एवं चौड़ाई 12 फीट के लगभग होनी चाहिए और इन पाइपों को 2–2 मीटर की आपसी दूरी पर सीधी लाइन में सरियों के बने 1 फीट के खूटों की सहायता से गाड़कर बना देते है। तत्पश्चात 100 माईक्रोन मोटी पारदर्शी पालीथीन से सम्पूर्ण रूप से ढक कर देते हैं और फसलों को इसके अन्दर लगा देते हैं। हाई–टनल एक ऐसे संरचना है कि इसके ऊपर कीटरोधी जाली, छायारोधी जाली एवं पालीथीन के टुकड़ों को फसल के आवश्यकता एवं मौसम परिवर्तन के अनुसार ढ़क सकते हैं। इस तकनीक के अन्तर्गत अपनी आवश्यकतानुसार प्रत्येक सब्जियों को उगा सकते हैं और सामान्य खेती से 2–3 गुना अधिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं। यह संरचना अस्थाई होती है। जिसको 2–3 माह बाद फसलों के ऊपर से हटा ली जाती है। या फसलों के माँग के अनुसार इनके कवर को बदल दिया जाता है। सामान्यतः 100 वर्ग मीटर की एक वाकिंग पाली टनल बनाने में 30–32 हजार रूपया की लागत आती है। इस प्रकार के टनल का उपयोग जाड़ों एवं बारिश के मौसम में अपनाना लाभकारी होता है। इसके अन्दर किसान भाई चाहे तो सामान्य सिंचाई फसलों में कर सकते हैं।

संरक्षित खेती करते समय ध्यान देने योग्य बातें

- सर्दियों के समय नेचुरली वेल्टीलेटेड पालीहाउस के अन्दर लगे सेडनेट पर्दों को खोल दें। वेल्टीलेटरों पर लगे पालीथीन पर्दों को प्रतिदिन शाम को गिरा दें। दिन में इन पर्दो को 2 घण्टे हेतु खोल दें या उठा दें।
- फैन–पैठ पालीहाउस में सर्दियों के समय, में कूलिंग पैड को न चालाएं। सिर्फ आधे घण्टे हेतु लगे सभी पंखों को दिन में 1–2 बार चला दें। जिससे पालीहाउस के अन्दर वातायन हो जाए।
- पलीहाउस कर छतों को सर्दियों के महीनों में धुलाई करके साफ कर दें, जिससे अधिक से अधिक सूर्य की रोशनी फसलों को मिलती रहे अन्यथा उत्पादन में गिरावट आ जाती है।
- टपक सिंचाई के सहयोग से भूमि में नमी की पूर्ति बनी रहनी चाहिए और उर्वरकों को घोल के रूप में देना चाहिए।
- सभी संरक्षित संरचनाओं को जमीन से 1–2 फीट की ऊंचाई पर बनाना चाहिए। जिससे बारिश के समय संरचनाओं के अन्दर पानी न लगे।

पूसा अरहर–16 की उत्पादन तकनीकी

रणजीत शरद राजे एवं ज्ञानेन्द्र सिंह
भा.कृ.अ.प– भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

विकसित उत्पादन तकनीकी का अनुपालन करते हुए भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान द्वारा विकसित अरहर की उन्नत किस्म से अधिक उत्पादन लिया जा सकता है।

उत्पादन तकनीकी

'पूसा अरहर 16' एक बहुत जल्द परिपक्व (120 दिन) होने वाली एक अर्ध–बौनी, अर्ध–खड़ी एवं कॉम्पैक्ट प्रकार की अरहर की नई किस्म है। इस किस्म की कटाई अक्टूबर के पहले पखवाड़े में की जा सकती है। इसकी उपज 18–19.5 क्विंटल प्रति हेक्टेयर है, इस किस्म को 30 सेंटीमीटर (पंक्ति से पंक्ति) की दूरी पर लगाया जाना चाहिये। इस किस्म की लंबाई जुलाई के पहले सप्ताह में बोये जाने पर 95–100 सेंटीमीटर और जून के पहले सप्ताह में बोये जाने पर लगभग 120–125 सेंटीमीटर तक होती है। इसकी दाल की गुणवत्ता भी बेहतरीन है।

खेत का चुनाव : अच्छे जल निकास व उच्च उर्वरता वाली दोमट या बलुई दोमट भूमि सर्वोतम रहती है। खेत में पानी का ठहराव फसल को हानि पहुँचाता है।

खेत की तैयारी : मिट्टी पलट हल से गहरी जुताई के उपरांत 2–3 जुताई हल अथवा हैरो से करना उचित रहता है। प्रत्येक जुताई के बाद सिंचाई एवं जल निकास की पर्याप्त व्यवस्था हेतु पाटा लगाना आवश्यक है।

बुआई का समय : 28 मई से 5 जून तक।

बीज की मात्रा : 19 से 20 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेअर।

बीज उपचार : 10 कि.ग्रा. अरहर के बीज के लिए राइजोबियम कल्चर का एक पैकेट पर्याप्त होता है। 50 ग्रा. गुड़ या चीनी को आधा लीटर पानी में घोल कर उबाल लें। घोल के ठंडा हो जाने पर उसमें राइजोबियम कल्चर मिला दें। इस कल्चर में 10 कि.ग्रा. बीज डालकर अच्छी प्रकार से मिला लें ताकि प्रत्येक बीज पर कल्चर का लेप चिपक जाये। उपचारित बीजों को छाया में सुखाकर दूसरे दिन बोया जा सकता है। उपचारित बीजों को कभी भी धूप में न सुखाऐं।

उर्वरक

नत्रजन	:	20 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेअर
फॉस्फोरस	:	40 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेअर
पोटाश	:	20 कि.ग्रा. जिप्सम प्रति हैक्टेअर
सल्फर	:	20 कि.ग्रा. जिप्सम प्रति हैक्टेअर
जिंक सल्फेट	:	20 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेअर .

उर्वरकों का प्रयोग मिट्टी परीक्षण के आधार पर करें।

दूरी : कतार से कतार की दूरी 30 से.मी. व पौधे से पौधे की दूरी 15 से.मी. होनी चाहिये।

छटाई : बुआई के 15 से 20 दिन के बाद छटाई कर पौधे से पौधे की दूरी 15 से.मी. कर दें।

खरपतवार नियंत्रण : बिजाई के तुरंत बाद उसी दिन पेंडिमिथलीन @ 1.0 कि.ग्रा. ए. आई/है. का छिड़काव करें। हाथ या खुरपी से 25 व 45 दिनों पर खरपतवार नियंत्रण करें।

अवांछनीय पौधों को निकालना : बहुत अधिक ऊँचाई तथा लाल रंग के फूल वाले पौधों को उखाड़ कर अलग कर दें।

सिंचाई : बुआई से पूर्व एक सिंचाई पलेवा के रुप में और लम्बे समय तक वर्षा न होने पर फली विकास की अवस्था के समय फसल की आवश्यकतानुसार सिंचाई करनी चाहिए।

पौध संरक्षण :–

उकठा (फ्यूजेरियम विल्ट) :– मेंकोजेब 63 प्रतिशत + कार्बेनडाजिम 12 प्रतिशत @ 2 ग्रा./कि.ग्रा. बीज को उपचारित करें।

ब्लाइट : बीज को रोडोमील एम.जेड. या मेटालेक्जिल एम.जेड. 2 ग्रा./कि.ग्रा. से उपचारित करें।

बन्ध्यमोजेक : प्रोपरगाइट पेंडिमिथलीन @ 0.1 प्रतिशत का दो बार छिड़काव करें। पहला छिड़काव 25 दिनों पर व दूसरा छिड़काव 45 दिनों पर करें। इसके बाद डिकोफॉल 0.2 प्रतिशत का छिड़काव करें।

कीट नियंत्रण :– कीट नियंत्रण के लिए निम्न कीटनाशकों का छिड़काव उचित समय, उचित मात्रा व उचित विधि से करें।

(अ.) फली छेदक, चूसक एवं ब्लिस्टर बीटल कीट नियंत्रण के लिए डेल्टामेथ्रिन 2.8 प्रतिशत ई.सी. (1 मि.ली./लीटर) या इंडोक्साकार्ब 15.8 प्रतिशत ई.सी. (1 मि.ली./लीटर) का छिड़काव कली की शुरुआत के चरण में करें।

(ब.) धब्बेदार फली छेदक एवं अन्य फली छेदक के नियंत्रण के लिए क्लोरॅन्ट्रानिलीप्रोल 18.5 प्रतिशत एस.सी. (3 मि.ली./10 लीटर) का छिड़काव 15 दिन के अन्तराल से करें।

(स.) यदि आवयश्क हो तो फ्लुबेन्डामाईड 39.35 एस.सी. (2 मि.ली./10 लीटर) या स्पिनोसैड 45 प्रतिशत एस.सी. (16 मि.ली./10 लीटर) या डेलटामेथ्रिन 2.8 ई.सी. (1 मि.ली./लीटर) का छिड़काव फली छेदक, ब्लिस्टर बीटल व बग के नियंत्रण के लिए करें।

कटाई : जब फसल की 80 प्रतिशत फलियाँ पक जायें तब फसल को काट लें।

अरहर के सफल उत्पादन के लिये निम्न बिन्दु अति महत्वपूर्ण हैः–

1. खेत उचित जल निकास युक्त होना चाहिए। पानी का ठहराव फसल को नुकसान पहुँचाता है।
2. उच्च उर्वरता वाली दोमट भूमि सर्वोतम रहती है।
3. छटाई : बुआई के 15 से 20 दिन बाद छटाई कर पौधे से पौधे की दूरी 15 से.मी. कर दें।
4. खरपतवार नियंत्रण : हाथ या खुरपी से 25 व 45 दिनों पर खरपतवार नियंत्रण करें। बुआई के तुरंत बाद पेडिमिथलीन / 1.25 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व/है. का छिड़काव करें।
5. कीट नियंत्रण : कीटों के नियंत्रण के लिए कीटनाशक का छिड़काव कली बनते समय अति आवश्यक है।

- पहला छिड़काव डेल्टामेथ्रिन 2.8 प्रतिशत ई.सी. का कली बनने की अवस्था में ब्लिस्टर बीटल व जैसिड की रोकथाम के लिए करें।
- 15 दिन के अंतराल से छिड़काव क्लोरॅन्ट्रानिलीप्रोल 18.5 प्रतिशत एस.सी. 3 मि.ली./10 लीटर का करें जिससे फली छेदक कीटों की रोकथाम की जा सके।

बीज का स्त्रोत : भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान का कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केन्द्र (एटिक), दूरभाषः 011–25841670, बीज उत्पादन इकाई, दूरभाषः 011–25842686, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रिय केन्द्र, करनाल, दूरभाषः 0184–2267166

लेखकों से...

1. अपने तकनीकी एवं लोकप्रिय लेख हिन्दी में टाइप करवाकर भेजें।
2. रचना पृष्ठ के एक ओर उचित हाशिया और पंक्तियों के बीच स्थान छोड़कर सम्पादक, प्रसार दूत के पास यथा समय भेजें।
3. वर्ष 2015 से प्रसार दूत का अंक त्रैमासिक किया गया है। लेखकों से अनुरोध है कि प्रथम अंक के लिए प्रकाशनार्थ सामग्री 30 जनवरी, द्वितीय अंक 30 अप्रैल, तृतीय अंक 31 जुलाई तथा चतुर्थ अंक 31 अक्तूबर तक अवश्य भेज दें।
4. तकनीकी पर दी गई जानकारी की पूरी जिम्मेदारी लेखक की होगी। रचना को प्रकाशित करने या न करने का पूरा अधिकार सम्पादक मंडल को होगा।

प्रसार दूत का प्रकाशन समय

प्रथम अंक मार्च, द्वितीय अंक जून, तृतीय अंक सितम्बर और चतुर्थ अंक दिसम्बर में प्रकाशित होगा।

वार्षिक शुल्क 80/- मनीऑर्डर द्वारा भेजें।

शुल्क और सामग्री भेजने एवं पत्रिका मंगवाने का पता

प्रभारी अधिकारी

कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केन्द्र (एटिक)

भा.कृ.अ.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110012

फोन: 011-25841670, 25846233, 25841039, 25803600

पूसा एग्रीकॉम: 1800 11 8989 (नि:शुल्क)

पाठकों से...

प्रसार दूत में प्रकाशित किसी भी तकनीकी के विषय में अंश और समाधान हेतु आपके पत्रों का स्वागत है। विषयों पर अधिक जानकारी के लिए लेखक से सीधे भी सम्पर्क कर सकते हैं।

किसानों से...

यदि आपकी खेती व पशु-पालन संबंधी कोई विशेष समस्या है, तो लिखकर भेजें। हम प्रसार दूत के माध्यम से उसका समाधान आप तक पहुंचाएंगे।

अन्त में ...

आपकी खुशहाली ही हमारी सफलता है।

प्रो. एम एस स्वामीनाथन पुस्तकालय

निदेशक, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012 द्वारा प्रकाशित तथा

मैसर्स एम एस प्रिंटर्स, सी-108/1 बैक साइड नारायणा इंडस्ट्रीयल एरिया, फेस-1, नई दिल्ली-110028, द्वारा मुद्रित

फोन: 7838075335, 9899355565, 9899355405,